पुष्करणों का इतिहास

देवज्ञ शास्त्र श्रमी,
इतिहासवेत्ता,
ज्योतिषविद
एवं समाज सेवी

पं. मीठालाल जी व्यास

पुष्करणों का इतिहास

जाति संगठन

नामक

प्रथम भाग

जिसको

पालीे–मारवाड़–निवासी

व्यास मीठालाल

ने

अनेक प्राचीन इतिहासों के प्रमाणों से

संग्रह करके प्रकाशित किया।

प्रथम आवृत्ति सन् 1929 ई. सं. 1986 वि.

द्वितीय आवृत्ति सन् 2013 ई. सं. 2070 वि.

अपनी बात

मेरे परमपुज्य नानाजी पं. श्रीमीठालाल जी व्यास ने वि.संवत 1966 में अपनी 50 वीं जन्मतिथि पर पुष्करणा ब्राह्मणों की प्राचीनता विषयक टॉड–राजस्थान की भूल नामक पुस्तक प्रकाशित कर समाज को समर्पित की थी। क्योंकि उस पुस्तक की प्रतियाँ उपलब्ध नहीं थी एवं 100 वर्ष पुरानी थी अतः उसकी द्वितीय वृति सं. 2066 उनकी 150 वीं जन्मतिथि पर छपवा कर समाज को समर्पित की गयी थी। उक्त पुस्तक संपूर्ण भारत में करीब 700 पुष्करणों को निःशुल्क उपलब्ध करायी गयी थी।

पं. मीठालाल जी व्यास द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'पुष्करणों का इतिहास' भी संवत 1986 (करीब 84 वर्ष पूर्व अनेक प्राचीन इतिहासों के प्रमाणों से संग्रह करके प्रकाशित की थी) उन्होंने समाज को समर्पित की थी लेकिन अब उसकी प्रतियाँ उपलब्ध नहीं है। जिसके पास भी यह प्रति उपलब्ध है या तो फट चुकी है अथवा उन्होंने अपनी धरोहर के रूप में रखे हो सकते हैं, जिससे संपूर्ण समाज को अपनी जाति के बारे में ज्ञान नहीं हो सकता। अतः पं. मीठालाल जी व्यास के दामाद एवं इन्द्रराज जी रामदेव की स्मृति में उक्त पुस्तक का पुनः मुद्रण कराया गया है एवं नाति में निःशुल्क वितरित करने का संकल्प लिया गया है। अतः इस पुस्तक को भी री–प्रिन्ट कराकर पुष्करणा समाज को समर्पित की जा रही है जिससे पुष्करणा बन्धुओं को अपनी जाति का इतिहास ज्ञात हो सके। नवीन प्रकाशन में श्री अनिल थानवी, सूरज संस्थान का सहयोग सराहनीय है।

श्याम सुन्दर रामदेव

(पुत्र श्री इन्द्रराज जी, दोहिता श्री पं. मीठालाल जी व्यास)

वास्ते श्री इन्द्रराज रामदेव स्मृति संस्थान

बी–32, लक्ष्मी निवास, गणेश मार्ग,

बापू नगर, जयपुर–302015

(13 मई 2013 अक्षय तृतीया)

वक्तव्य।

मैंने आज से 20 वर्ष पहिले 'पुष्करणे ब्राह्मणों की प्राचीनता विषयक टॉड-राजस्थान की भूल' नामक एक वृहत् पुस्तक प्रकाशित करके स्वज्ञाति सेवा में भेट की थी। उसमें मैंने 'पुष्करणोत्पत्ति' नामक एक वृहत् पुस्तक 10 भागों से युक्त प्रकाशित करने की इच्छा प्रगट की थी। और साथ ही उस पुस्तक को सर्वांश पूर्ण बनाने के लिए हमारी जाति सम्बन्धी प्रत्येक प्रकार के वृत्तान्त लिख भेजने के लिए समस्त स्वजाति बन्धुओं से भी प्रार्थना की थी। उसी का पुनः स्मरण गत वर्ष के वैषाख वदि 2 के पुष्करणेन्दु द्वारा आपको कराया गया था। किन्तु खेद है कि मेरी यह प्रार्थना सम्पूर्ण जाति के हितकर होने पर भी किसी सज्जन ने अद्यावधि इस पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया और आप महानुभावों की सहायता बिना मेरी इच्छानुसार पर्याप्त सामग्री उसके लिए उपलब्ध न हो सकने से वैसी समग्र पुस्तक एक साथ प्रस्तुत न हो सकी और इधर मेरा शरीर भी कई वर्षों तक अस्वस्थ रहने आदि से उक्त पुस्तक की पूर्त्ति मैं भी नहीं कर सका।

इधर मेरी अवस्था 70 वर्ष की हो चली है, और जीवन का कोई भरोसा नहीं, तथा श्रवणशक्ति एवं दर्शनशक्ति का भी ह्रास हो रहा है। ऐसी अवस्था में 'कुए की छाया कुए में ही रह जाती है' कि लोकोक्ति के भय से जो कुछ भी वृत्तान्त मैं संग्रह कर सका हूँ, उनके सारांश को ही पृथक्-पृथक भागों में प्रकाशित कर देना ही मैंने समुचित समझा है। परन्तु जैसी वृहत् पुस्तक एक साथ सम्पूर्ण भागों में प्रकाशित होनी चाहिए थी वैसा न हो सकने से इसका नाम 'पुष्करणोत्पत्ति' रखना उचित न देख कर इसका नाम 'पुष्करणों का इतिहास' रखा है। इसी में से अब यह 'जाति संगठन' नामक प्रथम भाग 'परिशिष्ट' सहित प्रकाशित किया गया है। इसी प्रकार 'पुष्करणों की राज भक्ति', 'पुष्करणों का राज सम्मान', 'पुष्करणों की लोक सेवा', पुष्करणों की राज पुरोहिताई, 'पुष्करणों के गोत्र कुल' आदि आदि भाग भी क्रम से प्रकाशित करने की पूर्ण इच्छा है। अतः आप से पुनः प्रार्थना है कि अब भी आप मेरी इस इच्छा को अवश्य और शीघ्र पूर्ण करें। ॐ शान्तिः 3।

अन्त में इसी पुस्तक के 'परिशिष्ट' में पुष्करणों के पूर्वजों के बसाये हुये 'पुष्करण' वा 'पोकरण' नगर का भी प्राचीन श्लोकबद्ध वृत्तान्त भाषानुवाद समेत

और टिप्पणियों सहित लगा दिया है, जिस नगर के और उसके बसाने वाले के नाम के साथ इस जाति का वर्त्तमान (पोकरणा) नाम करण हुआ है।

उपरोक्त श्लोकों वाली पुस्तक तो हमारे पूर्वजों के स्थापित 'प्राचीन पुस्तकालय, पाली', में मिलगई थी, किन्तु उक्त श्लोक परम्परा के लेखक दोष आदि से बहुत अशुद्ध हो गये थे। और इसको दूसरी प्रति खोज करने पर भी प्राप्त न हो सकी।अ अतः उन्हीं में से मुख्य-मुख्य श्लोक संग्रह करके उन श्लोकों का संशोधन कर देने आदि के लिए जोधपुर के सेवक पुरोहित श्रीमान् पण्डित बालमुकुन्दजी महाराज तथा जैसलमेर के जग्गाणी पुरोहित श्रीमान् पण्डित अमृतलाल जी वैद्यराज से सहायता ली गई है, इसलिए उन दोनों सज्जनों का मैं उपकार मानता हूँ। फिर भी प्राचीन श्लोकों का अधिक तोड़ मरोड़ करना उचित न समझने, तथा दृष्टि दोष आदि के कारण, जो कुछ भी अशुद्धियां इसमें रह गई हों उनके लिए पाठकों से क्षमा चाहता हूँ।

पाली-मारवाड़ विनीत- व्यास मीठालाल

लेखक का परिचय ......

देवज्ञभूषण, शास्त्रश्रमी, महान् ज्योतिषी व समाजसेवी-

पाली निवासी स्वर्गीय श्री मीठालालजी व्यास

जिन्होंने पुष्करणा जाति पर आरोपित मिथ्या कलंक का कुठार 'टाड राजस्थान की भूल' नामक पुस्तक का पूर्व में अवलोकन किया है उनको माननीय मीठालालजी व्यास का विशेष परिचय कराने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। वही उक्त पुस्तक आपके हाथों में है। आप का जन्म व्यासजी नारायणदासजी (नऊजी) के वशधर 'धीरजी' के वंश में हुआ। अतः 'श्रीधराणी व्यास' कहलाये। आपके पूर्वज जैसलमेर राज्य के उच्च पदाधिकारी थे। परन्तु पितामय खेतसीदासजी का ध्यान व्यापार की ओर अधिक होने के कारण ये विक्रम सं. 1865 में जैसलमेर से पाली आ गये। वहाँ महाजनी धन्धा आरम्भ कर दिया जो वर्षों तक चलता रहा। व्यापारी होने के अतिरिक्त ज्योतिष व वैद्यक के अपूर्व विद्वान थे। आपने अपनी ओर से परमार्थ औषधालय खोलकर जनता का बड़ा उपकार किया था। आपका पाली में बड़ा भारी पुस्तकालय भी था। उसमें अनेक हस्त लिखित अप्राप्य पुस्तकों का अपूर्व संग्रह था। खेतसीदासजी जैसलमेर की न्याति के पञ्च थे अतः पाली की न्याति ने भी आपको पञ्च का सम्मान प्रदान किया।

श्री मीठालालजी का जन्म विक्रम संवत 1916 में कार्तिक कृष्ण 10 को मध्याह्न के समय अपने ननिहाल जोधपुर में हुआ था। इनके पिता श्री महीधरदासजी व्यास अच्छे व्यापारी एवम् विद्वान् थे। इन्होंने पाली के अतिरिक्त मुल्तान, बहावलपुर आदि स्थानों में भी दुकानें खोली थीं। ये बड़े विद्वान् और सलाहगीर थे, अतः पाली निवासी जनता प्रायः इनसे सम्मति लेने जाया करती थी।

श्री मीठालालजी का शिशुकाल ननिहाल में ही व्यतीत हुआ। बाल्यकाल उपस्थित होते ही आप पाली आ गये और विद्याध्ययन करने लगे। आपका अध्ययन काल आरम्भ हुआ ही था कि आप समाज के घातक नियमों के अनुसार ग्रहस्थी की बेड़ियों से जकड़ दिये गये।

आपके दो विवाह हुऐ पहला बीकानेर राज्य के देराशरो आचार्य नथमलजी की कन्या काशीदासोत पुरोहित नथमलजी की दोहित्री रूकमणी से सं. 1928 और दूसरा जोधपुर राज्य के व्यास पदवी प्राप्त मादलिया पुरोहित जीवराज जी की कन्या चोहटिया जोशी सामन्तरामजी की दोहित्री रामप्यारी से सं. 1948 में हुआ। प्रथम स्त्री से सन्तान हुई पर जीवित नहीं रही। दूसरी गृहणी से लक्ष्मी देवी (लादी बाई) और यशोदा देवी (मादी बाई) नाम की ये दो कन्याऐं हुई। जिनका विवाह श्री श्यामदास जी रामदेव के वरिष्ठ पुत्र इन्द्रराज जी एवं तृतीय पुत्र शम्भूलाल जी रामदेव के साथ हुआ।

सं. 1932 में पूज्य पिता का देहावसान हो जाने के कारण आपकी देख रेख का भार आपके चाचा श्री अटलदास जी पर आ पड़ा। अटलदासजी तो व्यवसायी होने के कारण विशेषतया देश देशान्तर में रहते थे अतः मीठालालजी की शिक्षा आदि का उचित प्रबन्ध न कर सके। इस स्थान पर श्री अटलदासजी का संक्षिप्त परिचय दे देना उचित प्रतीत होता है। इनका जन्म सं. 1882 में और मृत्यु सं. 1946 में हुई थी व्यापार में बड़े कुशल थे, अतः साहस पूर्वक सं. 1910 में खुरासान की ओर गए और कन्धार में कोठी (दुकान) स्थापित कर दी। इनकी व्यापार कुशलता को देख कर वहाँ के अमीर बादशाह कोन्दल खां तथा उनके भाई काबुल के अमीर बादशाह दोस्त मुहम्मद खाँ ने अत्यन्त आदर के साथ इन्हें 'सेठ' की पदवी प्रदान की। इनमें योग आदि अन्य भी बहुत से गुण थे जिनसे ये जहाँ जाते वहीं सम्मान प्राप्त करते थे। हम ऊपर लिख आये हैं कि बाल्यकाल में ही मीठालालजी गृहस्थ की बेड़ियों में जकड़ दिये गये थे। परन्तु आप बड़े ही विलक्षण बुद्धि थे, अतः व्यापारी विद्या के साथ-साथ आपने ज्योतिष, वैद्यक, धर्म शास्त्र, इतिहास, योग शास्त्र, मन्त्रशास्त्र और पदार्थ विद्या आदि अनेक विद्याओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया। ज्योतिष शास्त्र में तो आप इतने निपुण हो गऐ कि 'वृहदर्ध्य मार्तण्ड' नामक ज्योतिष का अपूर्व ग्रन्थ निर्माण कर ज्योतिष संसार को अचम्भित कर दिया। उक्त ग्रन्थ बहुत बड़ा होने के कारण 'भद्रचक (त्रैलोक्य) दीपक 'वृष्टि प्रबोध' (भारत का वायु शास्त्र) 'सक्रान्ति प्रकाश' 'ग्रहण फल दर्पण' आदि पृथक-पृथक भागों में प्रकाशित किया। आज तक के प्रकाशित भागों से प्रसन्न होकर काशी आदि प्रसिद्ध स्थानों के विद्वानों ने आपको 'प्राचीन ज्योतिष शास्त्र श्रमी' 'देवज्ञ भूषण' 'ज्योतिष रत्न' उपाधियों से भूषित किया। उपरोक्त ग्रन्थों के अतिरिक्त 'इहलोक परलोक यात्रा' 'सन्ध्या मीमांसा' 'स्वरोदय सुवोध' 'पुष्करणा ब्राह्मणों की प्राचीनता विषयक टाड राजस्थान की भूल' आदि अनेक ग्रन्थ भी आपने निर्माण किये जो प्रायः सभी मुद्रित हैं। न्याति में फैली हुयी कुरितियों का अन्त करने के लिये आपने सम्वत् 1947 की कार्तिक कृष्णा 3 को 'श्री पुष्टिकर हितैषिणी सभा' नामक संस्था की जोधपुर में स्थापना की और इसके द्वारा न्याति में फैली हुई बहुत सी कुरीतियाँ नाश कर समाज को बहुत लाभ पहुँचाया।

हम ऊपर लिख आये हैं कि आप इतिहास के विद्वान थे। आपको ऐतिहासिक खोज से बड़ा प्रेम था। आपने इसी इतिहास प्रेम के वशीभूत हो उक्त संस्था द्वारा जाति इतिहास की खोज का काम आरम्भ किया और उसके लिये पुष्करणा समाज के सम्मुख एक प्रश्नावली तैयार कर प्रस्तुत की। करीब दो हजार रुपये भी इस कार्य के लिये एकत्रित किये परन्तु जनता से पूरा सहयोग न मिलने के कारण इस कार्य में सफलता नहीं मिली और इसी बीच में उक्त सभा का कार्य भी शिथिल हो गया। फिर भी आपका उत्साह कम नहीं हुआ और अपनी ओर से कार्य को चालु रक्खा।

बड़ी प्रसन्नता की बात है कि उन्हें इस कार्य में कुछ सफलता भी प्राप्त हुई जिसके

परिणामस्वरूप 'पुष्करणों का इतिहास' जाति संगठन नामक ग्रन्थ का प्रथम भाग प्रकाशित हो गया। जो आपके हाथों में है।

जिस समय टाड साहब ने अज्ञानवश पुष्करणा जाति पर 'ओड' होने का कलंक लगाकर भयंकर भूल की, उस समय पुष्करणा जाति का ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं निकला जो उस कलंक कालिमा को मिटाकर टाड साहब को उनकी भूल बता सकता। हमारे चरित्र नायक श्री मीठालालजी व्यास से यह मिथ्या अपमान न सहा गया और उन्होंने **'पुष्करणों की प्राचीनता विषयक टाड राजस्थान की भूल'** लिख कर पुष्करणा जाति को सदा के लिये एक बड़े भारी कलंक से मुक्त कर दिया। पुस्तक को श्री व्यास जी ने अपने ही व्यय से छपवाया और उसे जाति में बिना मूल्य वितरित किया। आपकी इस सेवा से प्रसन्न होकर जोधपुर, बीकानेर तथा सिन्ध आदि स्थानों के स्वजाति बंधुओं ने आपका बड़ा भारी सम्मान किया और जाति महासभा ने अपने बीकानेर के अधिवेशन में इन्हें स्वर्ण पदक प्रदान किया। आज भी व्यासजी का स्थान पुष्करणा समाज के हृदय में अन्य जाति नेताओं की अपेक्षा विशेष ऊँचा है।

हम ऊपर लिख आये हैं कि आप ज्योतिष शास्त्र के अपूर्व विद्वान थे अतः पाठकों को इसका दिग्दर्शन भी करा देना उचित प्रतीत होता है। सं. 1962 में आपने व्यापारियों के हितार्थ 'भावी फल' प्रकाशित किया जिससे व्यापारी वर्ग को इतना लाभ हुआ कि एक ही वर्ष में उसके अनेक ग्राहक हो गऐ। उक्त भावी फल की बातें अक्षरशः मिलती थीं अतः नवीन ज्योतिषियों ने उसकी नकल करना आरम्भ कर दिया, जिससे उनको बहुत लाभ हुआ। इतना ही नहीं उस भावीफल से हिन्दी के प्रचार में अच्छी सहायता मिली।

आप वास्तव में 'देवज्ञ' थे। आपको भविष्यवाणी प्रायः मिला ही करती थी। प्रथम युरोपीय युद्ध के प्रारम्भ ही में आपने कह दिया था कि विजय मित्र राष्ट्रों की होगी। कुछ दिनों बाद दैनिक वेंक्टेश्वर के दिनांक 18 अक्टूबर, सन् 1918 के अंक में स्पष्ट लिख दिया था कि महायुद्ध का भावी फल–मित्र राष्ट्रों की जय और जर्मनी का पतन होगा। यह भविष्यवाणी अक्षरशः सत्य प्रमाणित हुई। इससे चकित होकर कई प्रतिष्ठित सज्जनों तथा विद्वानों ने आपको अनेक प्रशंशा–पत्र प्रदान किये। दानशीलता से भी आप रहित नहीं थे। समय-समय पर आप पुष्करणा समाज को सहायता देते थे। 'पुष्टिकर हितैषिणी सभा' को सबसे प्रथम आप ही ने 2000 त्रिकाल सन्ध्या तथा वेदों की चार संहिताऐं प्रदान की थी। सुमेर पुष्टिकर हाई स्कूल को 525/– रु. प्रदान किये। जाति महासभा के आरम्भ से ही उस पर आपका बड़ा प्रेम रहा और आपने उसके जन्म समय 101/– रु. प्रदान किये।

वृद्धावस्था में आप जोधपुर चले आये और यहीं जातीय सेवा, भगवद् भजन व ज्योतिष कार्य में अपना शेष जीवन व्यतीत किया। आप गायत्री के परम भक्त व महान्

उपासक थे और इसी कारण आपने सिद्धि भी प्राप्त की और आप 'सिद्ध' के नाम से प्रसिद्ध थे।

आपके सिर्फ दो पुत्रियाँ श्रीमति लक्ष्मी देवी (लादी) एवं श्रीमति यशोदा (मादी) थी जिनका विवाह श्यामदास जी रामदेव के वरिष्ट पुत्र श्री इन्द्रराज जी एवं तृतीय पुत्र श्री शम्भूलाल जी के साथ हुआ। स्व. इन्द्रराज जी के पुत्र श्याम सुन्दर एवं स्व. शंभूलाल जी के पुत्र दुर्गाप्रसाद हैं जो जयपुर में क्रमश बापूनगर एवं श्याम नगर में निवास करते हैं। श्री मीठालाल जी ने अपने पोत्र श्री डॉ. पुरुषोत्तम को गोद लिया जो नेत्र विशेषज्ञ थे।

आपका स्वर्गारोहण ज्येष्ठ कृष्णा 6 सं. 2000 को जोधपुर में हुआ। आपके निधन से समाज का एक प्रकाण्ड पण्डित, जाति सम्मान रक्षक, महान् ज्योतिषी व देवज्ञ इस संसार से उठ गया। उनकी 155वीं जन्म तिथि पर पुष्करणा समाज को यह पुस्तिका सादर समर्पित है। ❑

– एस.एस. रामदेव, जयपुर

कार्तिक कृष्णा 10, संवत 2070
(155 वीं जन्म तिथि)
श्री मीठालाल जी व्यास

पुष्करणों का इतिहास

जाति संगठन नामक प्रथम भाग

ज्ञाति वृत्तान्त जानने की आवश्यकता–

आत्मनो ज्ञाति वृत्तान्तं, यो न जानाति ब्राह्मणः।
ज्ञातीनां समवायार्थ, पृष्टः सन्मूक तां ब्रजते ।।

यदि कोई भी ब्राह्मण अपनी जाति का वृत्तान्त न जानता हो, तो उस से जब कभी जाति सम्बंधी कोई भी बात पूछी जावे तो उसको लज्जित होकर मूकवत् (चुप) हो जाना पड़ता है। अतः प्रत्येक को अपनी–अपनी जाति के प्राचीन ऐतिहासिक वृत्तान्तों से जानकार होना चाहिये।

मनुष्यो की उत्पति –

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः, पदुभ्याँ शुद्रो अजायत ।।

(युजर्वेद, अध्याय २२, मन्त्र । १।)

सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा के मुख से तो ब्राह्मण, भुजा से क्षत्रियः ऊरु (जङ्घा) से वैश्य, और पैर से शूद्र उत्पन्न हुये। यही बात मनुस्मृति के प्रथमाध्याय के ३१ वें श्लोक में, तथा ऐसा ही वर्णन भागवत पुराण आदि में भी है।

मनुष्यों के चार वर्ण –

ब्राह्मणः, क्षत्रियो, वैश्यस्त्रपोवर्णा द्विजातयः ।
चतुर्थ एक जातिस्तु, शूद्रो, नास्ति तु पञ्चमः ।।

–मनुः।

मनुष्यों में गुण, कर्म, स्वाभावानुसार (१) ब्राह्मण (२) क्षेत्रिय (३) वैश्य, और (४) शुद्र –ये चार ही वर्ण माने गये हैं। इनमें, शुद्र को छोड़कर, प्रथम तीन वर्ण द्विज वा द्विजाति कहलाते हैं, क्योंकि उपनयन संस्कार द्वारा इनका दुसरा जन्म माना गया है। इसके अतिरिक्त पाँचवाँ वर्ण कोई नहीं है।

सम्पुर्ण ब्राह्मणों का एक समुदाय –

सृष्ट्यारम्भे ब्राह्मणानां, जातिरेका प्रकीर्त्तिता ।

सृष्टि के प्रारम्भ में तो ब्राह्मणों का एक ही समुदाय था, इस समय की भांति जाति-भेद कुछ भी नहीं था, किन्तु केवल गोत्र-प्रवर-वेद-शाखा आदि से पहचाने जाने का व्यवहार था।

ब्राह्मणों की दो सम्प्रदाये-

ततः कालान्तरे तेषां, देशाद्भेदोद्विधाऽभवत् ।।

फिर बहुत समय पीछे वे लोग बहुत दूर-दूर जा बसे। उन में जो विन्ध्याचल के उत्तरस्थ गौड़ देश में जा बसे वे तो 'गौड़' कहलाने लगे, और जो जो विन्ध्याचल के दक्षिणस्य द्रविड़ देश में जा बसे वे 'द्राविड़' कहलाये। इस प्रकार उनकी उत्तरी और दक्षिणी दो सम्प्रदायें बन गईं।

ब्राह्मणो के दश भेद-

गोडाश्च द्राविडाश्चैव, तेषां भेदा दशस्मृताः ।।

फिर वे गौड़ और द्रविड़ भी अपने-अपने देश में और भी पृथक-पृथक प्रदेशों में जा बसने से इन प्रत्येक के भी पाँच-पाँच भेद हो गये, जिससे सम्पूर्ण ब्राह्मणों के १० भेद हो गये।

जाति शब्दार्थ

विभिन्न गोत्र जातानां, समूहो जाति रूच्यते ।

भिन्न-भिन्न गोत्रों के, कई ब्राह्मणों ने ठौर-ठौर एकत्र होकर अपने-अपने पृथक-पृथक समूह बना लिये। उन्हीं समूहों को अब जाति कहते हैं।

जातियों के भिन्न-भिन्न नाम

एकत्र बहु कालेषु, स्थित्वाऽन्यत्र जगुस्ततः ।
तेन पूर्व स्थान नाम्ना, लोके ख्याति मुपागताः।।

प्रत्येक जाति वाले ब्राह्मण अधिक समय तक किसी एक ही स्थान में निवास करके फिर जब कालान्तर में, किसी कारण विशेष से, उस स्थान को त्याग कर अन्यत्र चले गये, तब वे अपने-अपने उसी पूर्व निवास स्थान के नाम से प्रसिद्ध हो गये, जैसे पाली से पल्लीवाल, श्रीमाल से श्रीमाली, साचोर से साचोरे, पोकरण से पोकरणा, आदि जातिये कहलाई ।

गौड़ो के पांच भेद-

सारस्वताः, कान्यकुब्जा, गौडा, उत्कल मेथिलाः ।
पञ्चगौडा, इतिख्याता, विन्ध्यस्योत्तरवासिनः ।।

1. सार स्वत, 2. कान्यकुब्ज 3. गौड़ 4. उत्कल और 5. मिथिला - ये पाँचो ही प्रदेश विन्ध्याचल के उत्तर वा पूर्व वाले गौड़ संज्ञा वाले देश में है। इन प्रदेशों में

जा बसने वाले ब्राह्मण भी अब अपने-अपने प्रदेश विशेष के नाम से प्रसिद्ध हो गये, और साथ ही समष्टि रूप में ये पांचो ही ब्राह्मण 'पञ्चगोड़' कहलाये ।

द्रविड़ो के पांच भेद-

कर्णाटकाश्च, तैलङ्गा, महाराष्ट्रश्च, द्राविड़ाः ।
गुर्जराश्चेति, पञ्चते, द्राविड़ा विन्ध्यादक्षिणे ।।

इसी प्रकार (१) कर्णाटक (२) तैलङ्ग (३) महाराष्ट्र (४) द्रविड़ और (५) गुर्जर, ये पाँचो ही प्रदेश विन्ध्याचल के दक्षिण या पश्चिम वाले द्रविड़ सख्या वाले देश में है। इन प्रदेशों में जा बसने वाले ब्राह्मण भी अब अपने २ प्रदेश विशेष के नाम से प्रसिद्ध हो गये, और साथ ही समष्टि रूप में ये पांचो ही ब्रह्मण पञ्चद्राविड़ कहलाये ।

ब्राह्मणों के चौराशी जाति भेद-

चतुराशीति विप्राश्च, दिग्भेदाश्चततोऽभवत् ।

फिर उपरोक्त दश प्रकार वाले ब्राह्मण भी भिन्न-भिन्न दिशाओं में और भी दुर-दूर जा बसने से इनके चौराशी जाति भेद हो गये। यह अध्यावधि ब्राह्मणों की चौराशी कहलायी है।

उक्त चौराशी जातियों के अन्त्याक्षरानुसार उनकी गणना-

चान्तास्त्रय, रचाष्टशैवरान्ताः,
डान्ताष्टकं, सप्तदशैववान्ताः ।
यान्ताश्च, लान्ताश्च, नवैव, ढान्ताः,
कान्तं द्वयं, गांग युगं च वान्तौ ।।
णान्तास्त्रय, स्तन्तयुगं, रुमोसौ,
बुढाचयाताश्चतुराशि विप्राः।।

उपरोक्त भिन्न भिन्न=4 प्रकार की ब्रह्मणों की जातियों के नामों की गणना उनके अन्त के अक्षरो के अनुसार इस प्रकार है, -अर्थात् अन्त्याक्षर 'च' के ३, 'र' के १८, 'ड' के १७, 'य' के ९, 'ल' के ९, 'ढ' के २, 'क' के २, 'गा' के २, 'ग' के २, 'व' के २, 'ण' के ३, *'त' के २, 'रु' का १, 'मो' का १, 'सौ' का १, 'बु' का १ और 'ढा' का १ नाम है।

ब्राह्मणों की भिन्न-भिन्न जातिएँ बनने का करण -

प्रारम्भ में तो मनुष्यों के गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार ब्राह्मण, क्षेत्रिय, वैश्य, और शूद्र ये चार वर्ण माने गये थे। उस समय ब्राह्मणोचित गुण-कर्म स्वभाव

** अन्त्याक्षर 'ण' वाली तीन जातियों में से एक जाति 'पुस्करणा' ब्राह्मणों की है।*

वाला हो जाने पर एक शूद्र भी ब्राह्मण हो जाया करता था और ऐसे ही शूद्र के से गुण-कर्म स्वभाव वाला हो जाने पर एक ब्राह्मण भी शुद्र हो जाया करता था। इस का प्रमाण मनुस्मृति के अध्याय १० के ६५ वें श्लोक में मिलता है, यथा-

शुद्रो ब्राह्मण तामेति, ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्

महाभारतादि में इस के कई उदाहरण मिलते हैं। परन्तु यह संसार चक्र सदा एकसा नहीं रहता। अतः कालान्तर में गुण-कर्म-स्वभावानुसार की वर्णव्यवस्था शिथिल हो जाने से उस के स्थान में जन्म की प्रधानता मानी जाकर उन चारों वर्णों के स्थान में उन्हीं चारों नामों से ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये चार 'जातिएँ' मानी जाने लगी।

पिछले इतिहास की पुस्तकें देखने से विदित होता है कि पिछले समय में वाममत के कारण यज्ञादि के नाम से पशुहिंसा का प्रचार हो जाने पर बौद्ध तथा जैन मतों ने अहिंसा धर्म का प्रचार किया, जिस से प्रायः भारत भर के लोग उन मतों में प्रवेश कर गये थे, जिससे उन चारों जातियों का प्रबन्ध ढीला पड़ गया। फिर श्री शंकराचार्य महाराज ने जब बौद्ध तथा जैन मतों को परास्त करके उनके मतों में गये हुए लोगों को पीछे वेदानुयायी बना दिये, उस समय के ब्राह्मणों में कितने ही ब्राह्मण ऐसे भी विद्यमान थे कि जो बौद्ध वा जैन मत में न जाकर सदैव ही से वेदानुयायी बने रहे थे। ये ब्राह्मण बौद्ध तथा जैन मत से पुनः लौट आये हुए ब्राह्मणों से रोटी बेटी का व्यवहार करना नहीं चाहते थे, इसलिये श्री शंकराचार्य महाराज ने समय सूचकता का ध्यान रख कर उन ब्राह्मणों की पृथक-पृथक जातियाँ ही बनादी, कि जिस से वे अपनी-अपनी जाति में रोटी बेटी का व्यवहार कर सके। उसी समय से ब्राह्मणों की भिन्न-भिन्न जातियों की स्थापना हो गई थी।

ब्राह्मणों की अनेक जातियाँ-

दिग्देश भेदा त्ते विप्रा, आचार परिवर्तनात ।
व्यवहाराहारभेदाजजातास्ते शतशः पुनः ।।

उपरोक्त जाति भेद वाले ब्राह्मण भी और-और अधिकाधिक दूर-दूर प्रदेशों में निरन्तर बहुत समय तक निवास करते रहने के कारण उन में एक दूसरे देश वालों के आचार विचार खान-पान आदि में भेद पड़ जाने-विभिन्नता हो जाने से कालान्तर में तो उन के सैकड़ों ही भेद हो गये। तब उन भिन्न-भिन्न ब्राह्मणों ने अपने-अपने अलग-अलग समुदाय नियत कर लिये, जिस से इनकी कई अन्यान्य जातियाँ भी हो गई।

ब्राह्मण निर्णय पुस्तक के निर्माता को ब्राह्मणों के ९०२ भेदों (जातियों) का पता लग चुका है। उन में से मुख्य ३२५ भेदों (जातियों) का विवरण उक्त पुस्तक

में दिया भी गया है।

जाति मर्यादा के नियम –

स्वजाति मान रचार्थ विप्राः प्रत्येक जातयः ।

देश कालानुसारेण, मर्यादां व्यदधुः पृथक् ।।

प्रत्येक जाति वाले ब्राह्मणों ने अपनी-अपनी जाति मर्यादा की रक्षा के लिये अपनी-अपनी जाति के उपयोगी नियम-देश कालस्थिति आदि के अनुकूल बना कर अपनी-अपनी जाति मर्यादा स्थिर कर ली ।

पुष्करणा जाति संगठन का सक्षिप्त वृतान्त

श्रीमाल पुराण का ऐतिहासिक दृष्टि से निरीक्षण करने से विदित होता है कि पूर्वकाल में भिन्न-भिन्न गोत्रों में के ब्राह्मणों में से 14 गोत्र के ब्राह्मण सैन्धवारणय (सिन्ध देश) में भी निवास करते थे। वे उस देश के राजाओं के पुरोहित होने से सिन्ध देश की प्राचीन राजधानी 'आलोर' वा 'आरोर' नगरी में विशेष संख्या में रहते थे। उन ब्राह्मणों ने अपने समुह के उपयोगी और देश के अनुकुल हो वैसे नियम बना कर अपने समुह की मर्यादा नियत करली थी। फिर वे ही ब्राह्मण कालान्तर में भीनमाल (श्रीमाल) में चले गये थे। किन्तु वहाँ के ब्राह्मणों के मत के साथ अपना मत न मिलने से वे वहाँ अधिक समय तक न ठहर कर पीछे लौट आये और देश कालानुसार पुराने नियमों में कुछ संशोधन कर के अपनी जाति मर्यादा फिर स्थिर करली थी। तभी से हमारी जाति का संगठन हुआ है।

पुष्करण जाति का पंचद्रविड़ो में से गुर्जर ब्रह्मणो की एक शाखा होना-

इन के पूर्वज पूर्वकाल में सैन्धवारण्य (सिंन्धु देश) में रहते थे। फिर वहाँ से श्रीमाल नगर में आ गये थे, और श्रीमाल नगर गुजरात में होने से वहाँ के ब्राह्मणों 'श्रीमाली' 'पुष्करण' आदि जातिये भी गुर्जर ब्राह्मणों की शाखये मानी गई थी।

पुष्करणों के पूर्वजों के कालान्तर में मारवाड़ आदि निर्जल प्रदेशों में अधिक समय तक निवास करने, तथा वहाँ के राजाओं के गुरू, पुरोहित, मुसाहिब, आदि राजभक्त शुभचिन्तक होने से मुसलमानी अत्याचार के समय अपने-अपने यजामन व स्वामी महाराजाओं के साथ-साथ जहाँ तहाँ भटकते फिरते रहने आदि से उन के आचार विचार में कुछ-कुछ शिथिलता हो गई है। तथापि इन का अत्याचार विचार तथा खान पान आदि सदा से प्रायः द्रविड़ सम्प्रदाय ही के अनुकूल अब तक चला आया है । उदाहरण स्वरूप ये न तो लशुन, पलाण्डू गृञ्जन आदि अभक्ष्य का भक्षण करते हैं ओर न हुक्का बीडी आदि अपेय का पान करते हैं ।

'ब्राह्मण निर्णय' नामक पुस्तक के पृष्ठ ३८३ में लिखा है कि 'हमने अपने

नेत्रों से देखा है कि पुष्करणे ब्राह्मण खान पान से बड़े पवित्र होते हैं।'

ऐतिहासिक विद्वानों ने भी पुष्करणों की गणना द्रविड़ों में के गुर्जर ब्राह्मणों में की है। उनमें से दो एक सज्जनों का उल्लेख हम यहाँ पर कर देते हैं:-

जाति विषयक विद्वान् श्रीयुत पाण्डोबा गोपालजी ने अपनी पुस्तक के पृष्ठ १०० में, जहां गुर्जर ब्राह्मणों की ८४ जातियों की गणना की है, वहाँ छठी संख्या पर पोरकरणे (पुष्करणे) ब्राह्मणों का भी नाम लिखा है।

(देखो 'ब्रह्मण निर्णय' पृष्ठ=३८०)

ऐसे ही पादरी रेवरण्ड शैरिंग साहब, एम.ए., एल.एल.बी ने भी अपनी पुस्तक 'हिन्दुकास्ट्स्' के प्रथम भाग के पृष्ठ ९९ में पुष्करणे ब्राह्मणों की गणना पञ्चद्राविड़ान्तर्गत गुर्जर ब्राह्मणों में की है।

इसी प्रकार भारत सरकार ने सन् १९०१ को मनुष्य गणना की पच्चीसवीं जिल्द 'राजपूताना सर्किल की रिर्पोट' के पृष्ठ १४६ में लिखा है कि-

"The Pushkarnas are a section of the Gurjar Brahmans."

अर्थात् पुष्करणे ब्राह्मण 'गुर्जर' ब्राह्मणों का एक भेद है। फिर उसी पुस्तक के पृष्ठ १६४ में गुर्जर ब्राह्मणों की नामावली में भी पुष्करणे ब्राह्मणों की गणना की है।

अहमदाबाद आदि गुजरात प्रान्त में सम्पूर्ण ब्राह्मणों की चौराशी को भोजन कराने की पुरानी प्रथा अब तक चली आती है। जब कभी वहाँ ऐसा भोजन होता है तो उस भोजन में पुष्करणे ब्राह्मण भी निमन्त्रित किये जाते हैं, और वे भोज में सम्मिलित होते हैं।

पुष्करण जाति का श्रीमाली जाति के साथ निकट संबंध –

पुष्करण और श्रीमाली-ये दोनों ही जातियाँ पञ्च द्रविड़ों में से गुर्जर ब्राह्मणों की एक शाखा के अन्तर्गत हैं। इन दोनों के आचार-विचार में देशकाल के कारण कुछ-कुछ विभिन्नता हो गई है, तथापि इन दोनों का मूल आचार द्रविड़ सम्प्रदाय ही के अनुकूल सदा से चला आया है। इन दोनों में १४।१४ छकड़ियों के ८४।८४ उपनाम हैं उन में से कितने एक उपनाम भी एक ही हैं (जैसे- गोदा, नवलखा, ठक्कुर, कपिञ्चल, पुच्छतोड़ा, गौतमीया, प्रमणेचा, जीवणेचा इत्यादि) इसके अतिरिक्त इन दोनों के गोत्र भी एक ही हैं, अर्थात् जिन १४ ऋषियों के १४ गोत्र पुष्करणों में हैं, उन्हीं १४ ऋषियों के नाम के १४ गोत्र श्रीमालियों में भी हैं। इत्यादि बातों के देखने से इन दोनों पूर्वजों का परस्पर अति निकट संबंध होना तो सिद्ध होता ही है, किन्तु श्रीमाली ब्राह्मण तो यहाँ तक मानते हैं कि ये दोनों एक ही मूल समुदाय

(जाति) में से दो विभाग होकर हुए हैं। स्कन्द पुराणान्तर्गत श्रीमाल माहात्म्य की एक पुस्तक 'श्रीमालपुराण' के नाम से, गुजराती भाषा टीका सहित, पं० जटाशंकर लीलाधर जी तथा पं० केशव जी विश्वनाथ जी नामक श्रीमाली सज्जनों ने सं० १९५५ में अहमदाबाद से प्रकाशित की है। उस पुस्तक के परिशिष्ट में दिये हुए संक्षिप्त इतिहास के अन्तर्गत पृष्ठ६८२ में, 'श्रीमाली मांथी पड़ेला बीजा विभागों' नाम शीर्षक के नीचे उक्त प्रकाशकों ने इस प्रकार लिखा है कि:-

'पुष्करणा- श्रीमाली मांथी ५००० पुष्करणा यथा कहवायछे जे सिंध देशानां ब्राह्मणों गोतमनी पूजा करवानी ना पाड़वाथी पाछा सिंध देश मां गया ते ओ सिंध पुष्करणा कहे वाया बाकी ना पुष्करणाओं जोधपुरमां रह्या तथा केटलाक गुजरात काठीयावाड़ तथा कच्छ मां आबीने वस्या. पोकरणा अे पुष्करणा नो अपभ्रंश शब्दछे'

(अक्षर गुजराती)

श्रीमाली ब्राह्मणों के इस कथन की पुष्टी उपरोक्त श्रीमाल माहात्म्य में के वर्णित इन दोंनो जातियों के पूवजों के विस्तृत वृतान्तों के मिलने से भी होती है।

श्रीमाल पुराण के प्रकाशन में अपूर्णता -

पुष्करणे ब्राह्मणों के पूर्वजों (सैन्धवारण्य के ब्राह्मणों) का तथा श्रीमाली ब्राह्मणों के पूर्वजों का वृत्तान्त स्कन्द पुराणान्तर्गत 'श्रीमाल माहात्म्य' में विस्तार से लिखा हुआ है, उसी में से उद्धृत पुष्करणे ब्राह्मणों के पूर्वजों से सबंध रखने वाले वृतान्तों का संग्रह रूप 'पुष्करणोपाख्यान' नाम एक प्राचीन पुस्तक है। उक्त श्रीमाल माहत्म्य के अध्यायों की संख्या १०३ होना सदा से सुनने में चला आया है। किन्तु इधर उसी श्रीमाल माहात्म्य की पूर्व प्रकरणोक्त 'श्रीमाल पुराण' नाम से प्रकाशित पुस्तक में केवल ७५ ही अध्याय दिये हैं। उस पुस्तक में पुष्करणे ब्राह्मणों से संबंध रखने वाले कितने ही श्लोक देखने में नहीं आये, यहाँ तक कि श्रीमाल क्षेत्र में भृगु ऋषि की कन्या श्री लक्ष्मी जी का श्री भगवान् के साथ विवाह होने के उपलक्ष्य में श्रीमाल क्षेत्र में नगर बसाने के लिए श्री भगवान् के दूतों द्वारा भिन्न-भिन्न तीर्थों पर से बुलाकर एकत्र किये गये ५०००० ब्राह्मणों की गणना में भी इन सैन्धवारण्य से आये हुए ५००० ब्राह्मणों की गणना तक का भी श्लोक नहीं दिया है।* इससे सहसा पठकों को तो यही ज्ञान होना सम्भव है कि वहाँ पर वे सैन्धवारण्य के ब्राह्मण तो थे ही नहीं। किन्तू यह बात नहीं है, वे वहाँ पर अवश्य थे, जैसा कि उसी

** आगर्त सैन्धवारण्या द्राजन् पंच सहस्त्रकम्।*
मुनीनां वेद वेत्तणां, ब्रह्म विधा विशारदाम्।।

प्रकाशित पुस्तक के ११, ३७ और ३८ वें अध्यायों में उनके वहाँ पर विद्यमान होने का स्पष्ट और विस्तृत वृतान्त मिलने से सिद्ध है। (जैसे वहाँ पर अकेले गौतम ही की पूजा के प्रस्तावकों का पुष्करणों के पूर्वजों द्वारा विरोध किया जाना, वह विरोध स्वीकृत न होने से उनका वहाँ से लौट कर पीछे अपने स्थान सैन्धवारण्य में चले जाना, फिर वहाँ पहुँच कर 'सारिका' को भेजना, सारिका के भय से अपनी, कन्याओं का विवाह बन्द हो जाने से वहाँ के ब्राह्मणों का नगर छोड़ कर आबू के जगल में जा बसना और फिर श्रीपुञ्ज राजा के उद्योग से सारिका के आदेशानुसार कार्य करने से पीछे शान्ति स्थापित होना आदि।) ऐसी दशा में फिर कोई भी कारण विदित नहीं होता कि उपरोक्त प्रकाशित पुस्तक में से पुष्करणे ब्राह्मणों से संबंध रखने वाले अन्यान्य कितने ही श्लोक क्यों निकल गये। सम्भव है कि यह पुस्तक मुख्य करके श्रीमाली ब्राह्मणों से संबंध रखने वाली होने आदि कारणों से पुष्करणे ब्राह्मणों की जाति की महिमा से संबंध रखने वाले श्लोकों को अपने यहाँ की उक्त पुस्तक में रखने की श्रीमाली ब्राह्मणों ने आवश्यकता ने समझी हो।

जातिस्थ ब्राह्मणों के उपनाम –

एकत्र समवायेतु, देश ग्रामानुसारतः ।
राज लब्धोपाधिनावा, कर्मणा गुणतोऽपिवा।।
येषां यथा परिचयस्तथा ते ख्यातिमागताः ।।
उपाधिरवटङ्कोवा, ऽऽस्पदंवा कीर्त्यतेहितत् ।।

प्रत्येक जाति के अन्तर्गत जो भिन्न-भिन्न गोत्रों के ब्राह्मण एकत्र हुए थे, वे भी देश-ग्राम व गुण-कर्म आदि के अनुसार अथवा राजादिकों की दी हुई उपाधियों के अनुसार उपनामों से पहिचाने जाने लगे, जिन्हें जाति में उपनाम, आस्पद, अल्ल आड़ नाम अवटङ्क, खोंप, नख वा उपजाति भी कहते हैं।

पुष्करणा जातिस्थ ब्राह्मणों के ८४ उपनाम –

पूर्व काल में चारो वेदों के ज्ञाता भिन्न-भिन्न गोत्रों में उत्पन्न हुये ब्राह्मणों में से जो १४ गोत्रों के ब्राह्मण सैन्धवारणय में भी निवास करते थे वे श्रीमाल क्षेत्र में श्रीलक्ष्मी जी के वर प्रदान से 'पुष्करणे कहलाये थे, जो कालान्तर में 'पोकरणे' कहलाये हैं। उन्हीं १४ गोत्रों के ब्राह्मणों ने सम्मिलित होकर अपनी सुविधा के लिए कुछ नियम देश काल केअनुकूल बना लिये थे, जिनसे पुष्करणा जाति का संगठन हुआ था, उस समय उनकी संख्या ५००० थी। उन ब्राह्मणों के पृथक-पृथक समूह वालों की पहिचान के लिए प्रत्येक गोत्र के ब्राह्मणों के ६-६ उपनाम नियत किये

गये थे, जिससे १४ गोत्रों के सम्पूर्ण ब्राह्मणों के ८४ उपनाम हो गये, जो 'खाँप' वा 'नख' के नाम से प्रसिद्ध हैं।

उपरोक्त चोराशी उपनामों की नामावली-

(1) उतथ्य गोत्री।

+ १ वाहेती — + ४ वाछड़
+ २ मेड़तवाल — + ५ पुछतोड़ा
+ ३ कूँपलिया — + ६ पाण्डेया

(2) भारद्वाज गोत्री

७ टङ्कशाली-व्यास — १० कपटा- बोहरा
+ ८ काकरेचा — + ११ चुल्लड़
+ ९ माथुर — + १२ आचार्य

(3) शंडिल गोत्री

१३ वोधा-पुरोहित — +१६ कादा
१४ गुञ्जन-गज्जा — + १७ किरता
+१५ हेडाऊ — १८ नवला

(4) गौतम गोत्री

१९ केवलिया — + २२ गोदा
२० त्रिवोड़ो-जोशी — + २३ गोदाना
२१ माधू — + २४ गौतमा

(5) उपमन्यु गोत्री

२५ ठक्कुर-उपाधिया — २८ बट्टू
२६ वदल — + २९ मातमा
२७ दोढ — + ३० बुज्झड़

(6) कपिल गोत्री

३१ कपिलस्थलिया- छाँगाणी — + ३४ मोला
३२ कोलाणी — ०३५ गणढड़िया-जोशी
३३ झड़ — + ३६ ढाकी

(7) गविष्ठिर गोत्री

+ ३७ दगड़ा — + ४० प्रमणेचा
+ ३८ पैढ़ा — + ४१ जीवणेचा
+ ३९ रामा — ४२ लापसिया

(८) पाराशर गोत्री

४३ चोवटिया-जोशी
४४ हर्ष
४५ पणिया
४६ औझा
+ ४७ विज्झा
+ ४८ झुराड

(9) काश्यप गोत्री

४९ बोड़ा
५० लोड़ा नाँगु
+ ५१ मुमटिया
५२ लुद्र कल्ला
+ ५३ काई
+ ५४ कर्मणा

(10) हारित गोत्री

५५ रङ्गा
५६ रामदेव-थानवी मूता
५७ उपाध्याय
+ ५८ आच्छु
+ ५९ शेषधार
+ ६० लाक (मूता)

(11)शुनक गोत्री

६१ विशा
+ ६२ विग्गई
+ ६३ विड़ङ्ग
+ ६४ टेटर
+ ६५ रत्ता
+ ६६ विल्ला

(12) वत्स गोत्री

६७ मत्तड़
+ ६८ मुडढर
६९ पडिहार
+ ७० मच्छर
७१ टिहुसिया-जोशी
+ ७२ सोमनाथा

(12) कुशिक गोत्री

७३ कवड़िया
७४ किरायत
७५ व्यासड़ा
७६ चूरा
७७ वासु
७८ किराड़

(13)मुद्‌गल गोत्री

७९ गोटा
+ ८० सिंह
+ ८१ गोदाणा
+ ८२ खाखड़
+ ८३ खीशा
+ ८४ खुहार

उपरोक्त ८४ नखों में से, जिन नामों के साथ + चिह्न है, उन नखों का पता प्रायः हमें नहीं मिला है। अतः जिन सज्जनों को कहीं पता मिले, तो वे लिख भेजने की कृपा करें, जिससे इस पुस्तक की द्वितीयावृत्ति में संशोधन किया जा सके।

उक्त उपनामों का विशेष विवरण-

उपरोक्त उपनामों के देखने से ज्ञात होता है कि- उनमें से कई देशों के नाम से जैसे- काकरेचा, माथुर, कपिलस्थलिया, आदि कई नगरों के नाम से -जैसे लुद्र, चोवटिया, किराड, आदि कई नगरों के नाम से जैसे- लुद्र, चोवटिया, किराड़, आदि! कई कर्मों के नाम से-जैसे आचार्य, उपाध्याय, त्रिवाड़ी, औझा आदि, इसी प्रकार अन्यान्य नामों से भी है। ये उपनाम उसी देश की और उसी समय की प्रचलित भाषा के हैं, कि जहाँ और जिस समय हमारी जाति का स्वरूप हुआ था। फिर जैसे-जैसे देशकाल बदलता गया, वैसे-वैसे भाषा में परिर्वतन होता रहा। उदाहरणार्थ आज से २००-४०० वर्ष पहिले की मारवाड़ी भाषा में और आजकल की मारवाड़ी भाषा ही में कितना ही अन्तर पड़ गया है, जिसको प्राचीन इतिहास के विद्वान भले प्रकार से समझते हैं। ऐसी दशा में जिस देश और जिस काल में हमारी जाति का सङ्गठन हुआ था, उस देश और उस काल की भाषा में आज कितना भारी अन्तर पड़ गया होगा इसका अनुमान कर लेना कुछ भी कठिन नही है। इसके अतिरिक्त प्राचीन हस्त लिखित पुस्तकों की नकले, साधारण कोटि के भिन्न-भिन्न लेखकों द्वारा भिन्न-भिन्न समयों में होती रहने से भी उन उपनामों में प्रायः लेखक दोष से भी कुछ न कुछ परिवर्तन हो जाना सम्भव ही है। इन सबका प्रत्यक्ष परिणाम यह हुआ कि उपरोक्त भिन्न-भिन्न पुस्तकों के श्लोकों में, भाषा के कवित्तों में और कुलकमल चक्रों में किन्हीं २ उपनामों में अन्तर देखने में आता है। तदनुसार हमारे यहाँ के 'प्राचीन पुस्तकालय-पाली, मारवाड़' में से जो पुस्तकें मिली हैं, वे भी अशुद्धियों से रहित नहीं है। एसी दशा में उन उपनामों का यथार्थ पूर्व स्वरूप अब ज्ञात नहीं होता, कि वे प्रारम्भ में किस प्रकार थे।

इसके अतिरिक्त कितने ही उपनाम खाँप वा नखवालों को पीछे से समय-समय पर भिन्न-भिन्न कारणों से भिन्न-भिन्न प्रकार की उपाधियाँ मिलती रहने से फिर वे 2 नख वाले उत्तरोत्तर उन उन उपाधियों ही के नामों से प्रसिद्ध होते रहे, जिससे कईयों में अनेकानेक परिवर्तन हो गये।

किन्तु नामों- उपनामों में किसी भी कारण से कुछ भी परिवर्तन हो जाने पर भी धार्मिक कार्यो में कुछ भी बाधा नहीं आती, क्योंकि ये नाम तो केवल पहिचानने ही के लिये नियत किये गये थे। इसी बात को ध्यान में रख कर उन नखों के नामों में विशेष संशोधन किये बिना, उनको वैसे ही रहने दिये हैं। ऐसा करने से यदि कहीं कुछ त्रुटि हो गई हो तो पाठक क्षमा करें। हाँ, उनकी भाषा आदि का संशोधन तो अन्यान्य पुस्तकों की सहयाता से यथा सम्भव कर ही दिया है। तिस पर भी यदि

उनमें भी कहीं अशुद्धियाँ रह गई हो तो सूचित करने पर द्वितीयावृत्ति में उनका उचित संशोधन कर दिया जावेगा।

उपनामों में परिवर्तन होते रहने आदि का वृतान्त -

ऊपर के कोष्टक में दिये हुए १४ गोत्रों के ८४ उपनामों (खाँपो वा नखों) में कई एकों में क्रमशः परिवर्तन होते रहे हैं,यथा-

(4) वाछड़- इनको कहीं तो 'आँवलिया' और कहीं 'पण्डिया' लिखा है।

(6) पाण्डेया- इनको कही 'पंड्या' कहते हैं।

(7) टङ्कशाली- लल्लूजी को लुद्रवा नगर के भाटी राजा मुन्धजी ने सं. ९९२ के वैशाख सुदी ९ को अपना गुरु बना कर 'व्यास' पदवी दी थी। फिर उन्हीं लल्लुजी लुद्रवा नगर में सं. ९९६ वैशाख सुदी को 'लक्ष भोज' नामक महाविष्णु यज्ञ किया था। उस समय एकत्र हुई समस्त स्वजाति ने भी उन्हें व्यास पदवी दी थी। तभी से टङ्कशाली नख वाले 'व्यास' कहलाते हैं। उनके वंश में भी कइयों का वंश अधिक बढ़ा, जिससे उनके वंश वाले अपने 2 उन 2 'वंशधरों के नामों सहित' 'व्यास' कहलाने लग गये, जिससे उन व्यासों की कई शाखाएँ हो गई हैं, जैसे- जैसलमेर में नऊँजी के वंश में ऋणछोड़, गोविन्द, भोपताणी, श्रीधर, गड़सी, कृष्णाँणी, डावाँणी, सेऊ (भणिया), हरखा आदि, जोधपुर में पोपोजी के वंश में नाथावत, गिरिधरोत, जोधावत, चत्ताणी आदि, बीकानेर में जूठोजी के वंश में जूठाणी, लालाणी कीकाणी, रत्ताणी आदि ऐसे ही अन्यान्यों के वंशों का भी विस्तार होता चला आया है।

(8) काकरेचा,(9) माथुर - किसी-किसी पुस्तक में लल्लूजी को काकरेचा लिखा है। इससे अनुमान होता है कि लल्लूजी को 'व्यास' पदवी मिल जाने से लल्लू जी के सहगोत्री होने से 'काकरेचा' तथा 'माथुर' भी व्यास कहलाने लग गये। जिससे व्यासों में मिल गये होंगे इसी से अब 'काकरेचा' तथा माथुर नख नहीं मिलते हैं।

(10) कपटा- सेऊजी मारवाड़ फलौधी परगने के ग्राम मलार में रहते थे। उन्होंने जोधपुर के 'मोटाराजा' उदयसिंह जी को बहुत से रूपये उधार दिये थे, इसलिए राजा ने उनको 'बौहरा' पदवी दी थी, तभी से कपटा नख 'बौहरा' कहलाते हैं।

(12) आचार्य - इनमें कोरेपोत्रा, ब्रह्मेपोत्रा, गणेशियाणी, काशियांणी, माँकड़िया, कंधोबुड़ा आदि भेद है। इनमें कोरेपोत्रा तथा ब्रह्मेपोत्रा प्रसिद्ध हैं। ब्रह्मोजी के वंश में से विमलाजी के वंश वाले आचार्य जैसलमेर के महाराजाओं को

वंश परम्परा के गङ्गाजल अरोगाते आये हैं। वे 'गङ्गाजली वाले आचार्य' कहलाते हैं। और उन्हीं के वंश के वेणीरामजी के वंशधर बीकानेर राज्य के देरासर (देवस्थान) की पूजा आदि करते आये हैं, उनके वंश वाले 'देरासरी आचार्य' कहलाते हैं। और जिन्होंने ज्योतिष् विद्या का प्रचार किया था जो राज्य ज्योतिषी रहे, वे 'ज्योतिषी आचार्य' कहलाते हैं।

(12) बोधा - ये पहिलें भटिराडे के बाराह जाति के राजाओं के वंश परम्परा के पुरोहित थे। फिर सं० ८९८ में देवायतजी के अपने शरण में आये हुये जैसलमेर के भाटी माहाराजा के पूर्वज भाटी राजा देवराज को अपना पुत्र बताकर अपने रत्नू नामक एक पुत्र के साथ भोजन कराके शत्रुओं से उनकी प्राण-रक्षा की थी। * इनसे फिर वे भाटी राजाओं के पुरोहित हो गये और तभी से 'बोधा नख' वाले 'पुरोहित' कहलाते हैं।

(किन्तु कच्छ में वे अधावधि 'बोधा' ही नाम से प्रसिद्ध हैं।) उनके वंश में भी कइयों का वंश अधिक बढ़ा, जिससे उनके वंश वाले अपने-अपने उन उन 'वंशधरों के नामों से पुरोहित' कहलाने लग गये। जैसे - श्रीपत, गोपा, वरसा, वल्लाणों, जग्गाणी, क्षेत्र पालिया, किसन दासाणी, गज्जाणी, चाण्डा, सूरदासाणी, दमाणो, वन्नांवत इत्यादि। इसी प्रकार पहिले किन्हीं गाँवों में निवास करने के पश्चात् वे फिर जब बड़े नगरों में जा बसे, तब वे पूर्व निवास के उन 'गाँवों नामों से पुरोहित' कहलाये। जैसे - बड़ली वाले, धालरवे वाले, मादलिये वाले, वरसलपुर वाले, वीकमपुर वाले इत्यादि। इस प्रकार पुरोहितों की कई शाखाएँ हो गई हैं।

पुरोहितों में चराडू जी बड़े विद्वान् ज्योतिषी हुए। (उनका चलाया हुआ 'चण्डू पञ्चाङ्ग' अधावधि उनके वंश वाले निकालते हैं।) चण्डू जी के तथा उनके भाई दामोदर जी के वंशावले चराडू जी के नाम पर 'चण्डवाणी जोशी' कहलाने लगे। फिर उनके वंश में भाऊजी मनरूप जी को जोधपुर के माहाराजा बखतसिंह जी से 'व्यास' पदवी मिली थी, तब से उनके वंशधर 'व्यास' कहलाने लगे। फिर पीछे से जब वह 'व्यास पद' दुसरों को दे दिया गया, तब से ये 'जूना व्यास' कहलाये। इस प्रकार इनमें चार परिवर्तन हो गये। अर्थात् पहिले नख 'बोधा' था, फिर वे 'पुरोहित' कहलाये, फिर 'चण्डवाणी जोशी' कहलाये, फिर 'व्यास' कहलाये और अब 'जूना व्यास' कहला रहे हैं।

** देवराज के साथ भोजन करवा देने से देवायत जी ने स्वयं ही अपने पुत्र रत्नू को अपनी पुष्करणा जाति से अलग कर दिया था। तब देवराज ने उसको अपना पोलपाट बारहट बनाकर उसे चारणों की जाति में मिला दिया था, जिसकी संतान अध्यावधि चारणों की जाति में विद्यमान है, और रत्नू की संतान होने से 'रत्नू चारण' कहलाती है।*

पुरोहितों में मादलिये के पुरोहित चतुर्भुज जी को जोधपुर के महाराजा मानसिंह जी ने 'व्यास' पदवी दी थी तब से उनके वंश वाले भी 'व्यास' कहलाते हैं।

पुरोहितों से में वीकमपुर के रहने वाले सहदेव जी के वंशवालों में से जो जोधपुर में आ बसे थे, उन में से जिन्होंने जोधपुर राज्य की पोतेदारी की थी उनके वंश वाले 'पोतदार पुरोहित' कहलाते हैं। और उन्हीं में से जिन्होंने राज्य के मंदिरों की सेवा की थी, उनके वंश वाले 'सेवग पुरोहित' कहलाते हैं।

पुरोहित में से जिन वंश वाले श्री जोधपुर दरवार की ड्योढ़ीदारी करते आये हैं, उनके वंश वोल 'ड्योढ़ीदार पुरोहित' कहलाते हैं।

पुरोहित में से जिन वंश वालों ने श्री बीकानेर राज्य के हाथियों की दारोगाई की थी उनके वंश वाले 'हाथियों वाले पुरोहित' कहलाते हैं।

(14) मुच्चन – ये अब 'गज्जा' नाम से प्रसिद्ध हैं।

(20) तिवाड़ी – ये 'तिवाड़ी जोशी' नाम से प्रसिद्ध हैं। परन्तु सिंध, कच्छ तथा हालार वाले इस नख को जानते ही नहीं हैं।

(25) ठक्कुर – जोधपुर के महाराजा के साथ में रहने वाले एक पुष्कराणें व्यक्ति को दिल्ली के मुग़ल बादशाह ने उनकी आकाय (बुद्धिमानी) पर मुग्ध होकर 'उपाधिया' (उपाध्याय) की पदवी दी थी तब से वे उपाधिया कहलाते हैं।

(30) कपिलस्थलिया – ये 'छाँगाणी' नाम से प्रसिद्ध हैं। उनमें से जिन्होने जोधपुर राज्य के देरासर (देवस्थान) की पूजा आदि का कार्य किया था, वे 'देराशरिया छाँगाणी' कहलाते है। यह पदवी पहिले 'व्यास पदवी' के सामान समझी जाती थी।

छाँगाणियों में से कचरदास जी को जोधपुर के महाराजा मानसिंह ने स० 1879 में व्यास पदवी दी थी, तब से उनके वंश वाले 'व्यास' कहलाते हैं।

(35) गणढड़िया – ये 'गणढड़िया' जोशी कहलाते हैं।

(40) प्रमणेचा – ये 'मूता' नाम से प्रसिद्ध हो गये थे।

(43) चोवटिया – इनमें प्रवर जी नामक एक महापुरूष ज्योतिष् विद्या में अद्वितीय विद्वान हुए थे, इससे चोवटिया नख वाले 'चोवटिया जोशी' कहलाते हैं।

(45) पणिया – इनमें आओ, ओटो, मोगो, गडू, और राय तथा होसी नाम मे भेद हैं। राय तथा होसी पणिया प्रसिद्ध हैं।

---

* जोधपुर में कबूतर खाने वालों के नाम से पुष्करणों का एक पृथक समुदाय हैं। वह इन्ही उपाधियों के निमित्त से बना था।

(46) ओझा – ये मण्डिपोत्रा, डाँडक, देवड़ा, भट्ट, तथा सेसाणी नामों से प्रसिद्ध हैं।

(49) बोड़ा – ये धारसू, सागर, गागेड़ा हिंगोल आदि नामों से प्रसिद्ध हैं।

(50) लोड़ा – पंजाब में ये 'नाँगू' नाम से प्रसिद्ध हैं, जिसका कारण यह है कि आज से 300 /400 वर्ष पहिले लोड़ा नख के विक्काराम जी नाम के एक बड़े प्रसिद्ध सिद्ध पुरूष हो गये हैं। वे एक दिन घूमते–घूमते कोडा जाति के अपने एक भाटिया यजमान के घर जा निकले। यजमान की स्त्री ने कुछ सिद्धाई दिखलाने के लिये उनसे अनुरोध करते हुए अधिक हठ किया। तब उन्होने कहा कि तू चूल्हे पर क्या पका रही है? उसमे जाकर देख। तब वह "बैगन पकाती हूँ " कहती हुई भीतर गई और जाकर ज्योंही ढक्कन उठाकर देखा तो उसमें एक सर्प फुत्कार मारता हुआ निकला, जिससे घबराकर 'इससे बचाओं' की पुकार करती हुई भाग निकल कर उसने अपने पुरोहित जी के पैर पकड़ लिये। तब विकाराम जी ने उस नाग को उठाकर अपने गले में डाल लिया, जिससे लोग उन्हे 'नाँगू' कहने लग गये। इसलिए उन के वंश वाले 'नाँगू' कहलाते हैं।

(52) लुद्र – सिद्धृ जी के फलौदी में पंचपर्वी नामक लघु विष्णुयज्ञ किया था, उस समय से लुद्र नख वाले 'काला' फिर 'कल्ला' कहलाने लग गये, जिसका वृतान्त पुष्करणों के भाटों की बही में लिखा मिलता हैं। ये पंजाब में 'रूद्र' और सीमा प्रान्त में 'काला' कहलाते हैं।

(56) रामदेव – लुद्रवा नगर के पँवार राजा जसभाण ने सं० 900 में इन नख के दो भाइयों में से बड़े भाई वीरपाल जी को तो राज्य की थानेदारी दी थी, जिससे उनकी सन्तान तो 'थानवी' कहलाये, और छोटे भाई गंगाजल जी को राज्य के कोठार की दारोग़ाई दी थी, जिससे उनकी संतान 'मूता' कहलाये हैं।

(62) विशा – इनके गोगिया, मापारा, सिद्धाणी, नानगाणी आदि नाम भी हैं। इनमें जिन्होंने राज्य के घड़ियालखाने की दारोग़ाई की थी, उनकी सन्तान 'घड़ियालीविशा' कहलाते हैं।

(66) विल्ला – अनुमान होता है कि ये संख्या में कम होने से अपने सहगोत्री 'विशों' में मिल गये होंगे। वे ही विशों में अब 'बीला विशा' कहलाते हैं।

(72) टिहुसिया – ये 'टिहुसिया जोशी' कहलाते हैं।

(75) व्यासड़ा – इनके और व्यासों के नामों में कुछ सदृश्यता होने से भ्रम वश कहीं ये व्यासों में सम्मिलित हो गये होंगे ।

(77) वासू – ये डंग, झंग, लाखा, आदि भेदों से प्रसिद्ध हैं।

ब्राह्मणों की कितनी ही जातियों पर मिथ्या दोष लगाये जाने के कारण –

इधर पिछले समय के ब्राह्मणों में उच्च नीचता का भाव उत्पन्न हो जाने के कारण ब्राह्मणों की भिन्न भिन्न जातियों की स्थापना हो गई जिससे परस्पर में ईर्ष्या, द्वेष, मिथ्या अभिमान, अनुचित लोभ, आदि दुर्गुणों की प्रवृति उत्पन्न हो जाने से एक दुसरे को नीचा दिखाने के लिए अपने से भिन्न अन्यान्य ब्राह्मणों पर अनेक प्रकार के मिथ्या दोष लगाये जाने लगे। ऐसी प्रवृति पहिले ही पहिले राजाओं के पुरोहितों – कर्मठ ब्राह्मणों में उत्पन्न हुई दिखती हैं, जिसका प्रमाण अथर्व परिशिष्ट ग्रन्थ के 12 वें अध्याय में विस्तार से लिखा मिलता है। उसमें का एक ही श्लोक लिख देने से पाठकों को ज्ञात हो जावेगा कि अपनी महिमा बढ़ाने के लिए दुसरों की किस प्रकार निन्दा की गई है–

वह् वृचोहन्तिवै राष्ट्रं, अध्युर्युर्नाशयेत् सुतान् ।
छान्दोगोनाशये द्धनं, तस्मादथर्वणो गुरूः ।।

राजा का पुरोहित यदि ऋग्वेदी हो तो उस राजा के राज्य का नाश, यजुर्वेदी ब्राह्मण हो तो उस राजा के पुत्र कलत्रादि का नाश, और सामवेदी ब्राह्मण हो तो उस राजा के धन का नाश हो जाता है, इसलिए राजा का पुरोहित होने योग्य ब्राह्मण केवल अथर्ववेदी ही है अर्थात् अथर्ववेदी ब्राह्मणों से ही यज्ञादि कार्य कराने चाहिये। जब अथर्ववेदी ब्राह्मणों ने लोभ और ईर्षा वश अपनी मनमानी महिमा बढ़ाने के लिए दुसरे वेदों वाले ब्राह्मणों की इस प्रकार निन्दा की, तब दूसरे वेदों वाले ब्राह्मणों के लिए भी अथर्ववेदियों की निन्दा करना स्वाभाविक ही था।

यह राजाओं के पुरोहितों– कर्मठ ब्राह्मणों का द्वेष फैलते फैलते ब्राह्मणों की भिन्न भिन्न जातियों मे भी आ घुसा, अर्थात् एक जाति वाले ब्राह्मण दुसरी जाति वाले ब्राह्मणों को नीचा दिखाने के लिए उनकी मनमानी मिथ्या निन्दा करने लग गए, जैसे –

किसी जाति को तो 'काने और कुबड़े, की संतान' किसी जाति को 'कैवर्त्त (भील)' की संतान, किसी जाति के 'नदी में बह कर आई हुइ मुर्दो की लाशों से जीवित किये हुओं' की संतान, किसी जाति को 'गधे की हड्डी से योनि में वीर्य प्रक्षिप्त करने से उत्पन्न हुओं' की संतान, किसी जाति के 'पुष्कर खोदने वाले ओडों' की संतान, किसी जाति के 'धड़ तो ब्राह्मण का और शिर माली का ऐसे मनुष्य' की संतान, किसी जाति को 'सन्यासी' की संतान, किसी जाति के 'पिता ब्राह्मण और माता गूजरी' की संतान, किसी जाति को 'पिता ब्राह्मण और माता शूद्राणी' की संतान, किसी जाति को 'पिता क्षत्रिय और माता ब्राह्मणीं' की संतान,

किसी जाति को 'पिता कैवत्त (भील) और माता गोलकी' की संतान, इस प्रकार कितनी ही जातियों पर कई प्रकार के दोष लगाये गये। इतना ही नहीं, किन्तु किन्हीं किन्हीं जातियों पर तो यहाँ तक दोष लगाये गये कि अमुक-अमुक जाति के ब्राह्मण यदि वृहस्पति के समान भी हों तो भी पूजने के योग्य नही; अमुक-अमुक जाति के ब्राह्मण यदि शिवजी के समान हो तो भी श्राद्ध, विवाह, यज्ञादि कर्मों में बुलाने योग्य नही; तथा आमुक जाति के ब्राह्मण दधीच के शाप से शापित, अमुक जाति के ब्राह्मण गौतम के शाप से शापित, अमुक जाति के ब्राह्मण वेद वाह्यता के शाप से शापित होने से दान देने योग्य नही, अमुक जाति के ब्रह्मण प्रेत कर्म कराने वाले होने से शुभ कार्य में बुलाने योग्य नहीं; अमुक जाति के ब्राह्मण निर्दयी, अमुक जाति के ब्राह्मण दुर्जन; अमुक-अमुक देश के ब्राह्मण सत्कार के योग्य नहीं आदि। यह तो द्वेषी ब्राह्मणों की द्वेषलीला का दिग्दर्शन मात्र ही कराया है। जिन्हें अधिक जानने की इच्छा हो वे 'ब्रह्मणोत्पत्ति-मार्त्तण्ड' तथा 'ब्राह्मणनिर्णय', ऐसे ही रिपोर्ट मर्दमसुमारी राज्य मारवाड़, सन् 1891 के तीसरे भाग आदि ग्रन्थ देखले।

इस प्रकार एक दुसरी जाति के विरूद्ध अनेकाने श्लोक कवित्त, दोहे तथा जन श्रुतियें (लोक अफवाहें) घड़ कर फैलाई गई, और सच्चे इतिहास के अभाव में ये कल्पित कहानियां ही, इतिहास की पुस्तकों में स्थान पा गई।

पुष्करणा जाति पर किये हुए मिथ्या आक्षेप का सप्रमाण खण्डन -

दुसरे की महिमा देख कर जलने वाले तथा दूसरों को नीचा दिखाने से आनन्द मनाने वाले द्वेषी लोगो को एक बहाना इस प्रकार मिल गया। अर्थात् इस जाति के ब्राह्मणों का नाम 'पुष्करणा' वा 'पोकरणा', और अजमेर के सीमावर्ती प्रसिद्ध तीर्थक्षेत्र का नाम 'पुष्कर' या 'पोकरण' इन दोनों नामों में कुछ सादृश्यता मिल गई। बस इनके लिए इन्होंने झटपट एक 'लोक अफवाह' गड़ा ही डाली कि 'मराडोर के राजा नोहरराव पड़िहार ने जब पुष्करजी की रेत खुदवाई थी, तब उसने ब्रह्मभोज कराने में पर्याप्त संख्या के ब्राह्मणों के आभाव में उसके खोदने वाले ओड़ों ही को ब्राह्मणों के साथ जिमा के उन्हें ब्राह्मण बना दिया'।

---

* इस प्रकार श्रीमाली ब्राह्मणों के विषय में भी एक मिथ्या लोक अफवाह प्रचलित है, कि धड़ तो 'ब्राह्मण का और सिर मालीका' ऐसे पुरूष की जो सन्तान हुई वे लोग सिरमाली ब्राह्मण कहलाये। यह कहानी अंग्रेजी की किताब गेजेटियर में तथा रिपोर्ट, मर्दुमशुमारी, राज्य मारवाड़ में स्थान पा गई है। उक्त कहानी का अंग्रेजी का हिन्दी अनुवाद और रिर्पोट मर्दुमशुमारी के लेख की नकल श्रीमाली अभ्युदय में प्रकाशित हुई थी। तभी से इसके खण्डन की पुकार मची हुई है। किन्तु खेद है कि इसका खण्डन आज तक किसी श्रीमाली विद्वान् ने नही किया है। हाँ हमने तो अलबत्ता कई वर्ष हुये, अपनी पुस्तक 'पुष्करणों की प्राचीनता विषयक टॉड- राजस्थान की भूल', में इस कहानी को भी स्पष्ट मिथ्या लिखदी थी।

टॉड साहब ने सन् 1835 में राजपूताने का एक इतिहास लिखा है। उसके द्वितीय भाग में जैसलमेर के इतिहास के 7 वें अध्याय, में जहाँ पुष्करणों का वृतान्त लिखा है, वहाँ उन्होंने किसी भी भूल से उन्हीं द्वेषी लोगों की मनघटित उक्त मिथ्या कहानी को 'अजब कहानी' मान के लिख दी है।

और चिन्ता परिश्रम की 'सीधी खिचड़ी' खाने वाले अलग-अलग अन्य अंग्रेज ने भी वहीं अपनी-अपनी पुस्तक में 'भेड़िया धसान' की भाँति आँख मीच के टॉड राजस्थान से उदधत कर लिख दी है, जैसे मिस्टर जॉन विसलसन ने अपनी इतिहास की पुस्तक 'हिन्दू कास्टस एण्ड टाइब्स' में और इवटसन साहिब ने भी रिपोर्ट, मर्दुमसुमारी पंजाब में लिखदी हैं।

किन्तु टॉड-राजस्थान से इस प्रकार धोखा खा जाने वाले लेखकों ने इतना सा भी विचार करने का कुछ भी कष्ट नहीं उठाया, कि स्वयं टॉड साहिब को भी इस मिथ्या कहानी पर कुछ भी विश्वास नहीं था, तभी तो उन्होंने इसे पुष्करणों की 'उत्पत्ति का इतिहास' न लिखकर केवल एक 'अजब कहानी' करके लिखी है, क्योंकि जो बात असमंभव नामुम्किन, नहीं होने योग्य हो, उसी को 'अजब कहानी' कहते हैं।

उसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी तनिक नहीं विचारा कि जिस 'राजस्थान' के आधार व भरोसे पर हम पुष्करणों की उत्पत्ति की ऐसी ऊटपटाँग बात लिखने का दुःसाहस कर रहे हैं उसी राजस्थान में, और उसी जैसलमेर ही के इतिहास के दूसरे अध्याय में, पुष्कर खुदने से 300 वर्ष पहिले ही एक पुष्करणे ब्राह्मण की विद्यमानता स्पष्ट स्वीकार की गई हैं। वह ऐतिहासिक सत्य घटना इस प्रकार है -

जैसलमेर के वर्तमान भाटी महाराजाओं के पूर्वज राजा विजयराज का पुत्र भाटी देवराज संवत् 898 में अपने शत्रु भठिण्डे के वाराह जाति के राजाओं से मारे जाने के भय से भाग कर उन्हीं वाराह जाति ही के वंश परम्परा के पुरोहित (कुल गुरू) पुष्करणा ब्राह्मण देवायतजी के शरण में चला गया था। शत्रुओं की सेना को पीछा करते आती हुई देखकर और उसकी रक्षा का अन्य कुछ भी उपाय न देखकर समय सूचकता से उन्होंने देवराज के गले में यज्ञोपवीत (जनेऊ) डालकर उसके साथ अपने पुत्र रत्नू को एक ही थाली में भोजन करने बिठा दिया, और उसे अपना पुत्र घोषित कर दिया, जिसमें उस शत्रु सेना को वहाँ पहुँचने पर यही विश्वास हो गया कि यह तो देवराज नहीं, किन्तु इसी ब्राह्मण का पुत्र है।

इस प्रकार उक्त पुरोहित ने शत्रुओं के हाथ से देवराज के प्राण बचा लिये। किन्तु, क्योंकि रत्नू ने एक अन्य जाति के साथ भोजन कर लिया था, इसलिये

पुष्करणे ब्राह्मणों ने उसे अपनी जाति से पृथक कर दिया। अतः उसी भाटी राजा देवराज ने, अपना राज्य पीछा स्थापित हो जाने पर, अपने भ्राता रत्नू ब्राह्मण के जातिच्युत हो जाने से उस को अपने 'पोलपोट' बारहट बना कर उसे चारणों की जाति में मिला दिया था। तभी से उसकी संतान अधावधि चारणों की जाति में विद्यमान है और वे अपने उसी पूर्वज के नाम 'रत्नू चारण' कहलाते हैं। और रत्नू के दूसरे भाइयों की ब्राह्मण संतान पूर्ववत् जैसलमेर के भाटी महाराजाओं की पुरोहिताई सदा से करते चले आये हैं। स्मरण रहे कि पुष्करजी का तालाब मण्डोर के नाहरराव पड़िहार ने संवत् 1212 में खुदवाया था, जिसके प्रमाण का एक दोहा सर्वत्र प्रसिद्ध है वह यहाँ लिखता हूँ-

संवत् थारै बारो तरै, पुष्कर षाँष्यो धाम ।
प्रेमपालरा नाहर राव, थैं कियो निश्चल नाम ।।

तथा पुष्कर जी का इतिहास लिखते समय टॉड साहिब ने भी राजस्थान के भाग 1 के अध्याय 4,5,7 और 26 वें में मण्डोर के अन्तिम पड़िहार राजा नाहरराव की विद्यमानता विक्रम संवत् 1206 में मानी है।

अतः 'टॉड राजस्थान' की 'अजब कहानी' के अनुसार पुष्करणे ब्राह्मणों की उत्पत्ति भी पुष्कर खुदने पर सं. 1200 के लगभग ही होनी चाहिये, किन्तु ऐसा नहीं है, क्योंकि उसके खुदने से बहुत काल पूर्व ही से पुष्करणे ब्राह्मणों की विद्यमानता उपरोक्त तथा अन्यान्य कई ऐतिहासिक सत्य घटनाओं से भली भाँति सिद्ध है।

किन्तु टॉड साहिब स्वयं विदेशी होने से हमारे देश की प्रजाति मर्यादा से तो अनभिज्ञ थे ही फिर इस देश के प्राचीन इतिहास संबंधो यथा तथ्य प्रामाणिक लेख भी बहुधा उन्हें समय पर उपलब्ध न हो सके थे। इसी से लाचारन कई बातें उन्हें अटकल पञ्चू सुनी सुनाई भी लिख देनी पड़ी थी। ऐसी दशा में यह एक ही क्या, कई भूलें उनसे हो गई हैं, जिन को इतिहासज्ञों ने समय-समय पर जतला कर उनका संशोधन भी कर दिया है।

इस सब के उपरान्त अधिक ध्यान देने की बात एक यह है कि पुष्कर क्षेत्र और उसके आस पास के प्रान्त में चारों और गौड़ सम्प्रदाय ही के ब्राह्मणों की अधिकता है, अतः यदि पुष्करणों की उत्पति पुष्कर खोदने वाले ओडो ही से हुई होती तो इनका आचार-विचार खान-पान आदि भी पंच गौड़ों ही के सदृश होता। किन्तु ऐसा नहीं है, उनका व्यवहार तो पंच द्राविड़ों ही का सा सदा चला आया है।

इसके उपरान्त अत्यन्त ही अधिक ध्यान देने की यह बात भी है कि सृष्टि का नियम है कि जिनकी उत्पत्ति जहाँ होती है। वहीं अधिकता से पाये जाते हैं। जिस

प्रकार सृष्टि के प्रारम्भ में मनुष्यों की उत्पत्ति हिमालय प्रदेश में होने के कारण जितनी आबादी (Density of Population) हिमालय के आस-पास के देशों (भारतवर्ष और चीन) में है, उनती अन्य देशों में नहीं है। ऐसे सारस्वत, कन्याकुब्ज, गौड़, उत्कल, मैथिल, कर्णाटक, तैलङ्ग, महाराष्ट्र, द्राविड़, गुर्जर आदि ब्राह्मण की अधिकता उन्हीं 2 देशों में हैं, जिन-जिन के नाम से उनका नामाकरण हुआ है। ऐसे ही यदि पुष्करणा ब्राह्मणों की उत्पति पुष्कर जी ही पर हुई होती तो इनकी आबादी भी पुष्कर पर अवश्य होनी चाहिये थी। किन्तु 20000 बीश सहस्त्र घर होने पर भी पुष्कर जी पर इनका एक भी घर नहीं है। पुष्कर जी तो क्या पुष्कर जी के आस पास भी पुष्करणे ब्राह्मणों की बस्ती बिलकुल नहीं है * और न पुष्कर जी से समूले इनके चले जाने ही का कोई प्रमाण मिलता हैं। वरन् इसके विपरीत, ये बहुत प्राचीन काल में सिंध देश में बसते थे और फिर वहा से मारवाड़ में आये, और मारवाड़ से सर्वत्र फैले हैं। अब भी इनकी आबादी जितनी सिंध कच्छ मारवाड़ में हैं उतनी और कही नहीं है उपरोक्त बातों की पुष्टि रिर्पोट, मर्दुमशुमारी राज्य मारवाड़ सन 1792 के तीसरे भाग के पृष्ठ 255 व 262 में इस प्रकार की हैं, तथा -

1.'पुष्करणा वा पोकरणा ब्राह्मण-ये मारवाड़ में सिंध से आये हैं इनके गीत और गालियों में अब तक सिंधी लफज मौजूद है।

2.'पुष्करणे ब्राह्मण मारवाड़ के उत्तर और पश्चिम थल यानी निर्जल हिस्सों में ज़ियादा बसते हैं। उससे आगे बीकानेर, जैसलमेर और सिंध तक इनकी बसती चली गई है, बल्कि मारवाड़ में उधर ही से आये हैं। अकसर खाँपों के बयानों से पाया जाता है, कि वे पहिले जैसलमेर के इलाके में रहती थी। वहाँ फलौदी आईं, और फलौधी से जोधपुर वगैरह: परगनों में जाकर वसी हैं। इनके पुराने गीतों से, जो रसम के तौर पर व्याहों में गाये जाते हैं, निर्जल मुल्क में इनके असली वतन होने का पता लगता है।

उसी रिपोर्ट में, ऊपर लिखी हुई ऐतिहासिक घटना को सत्य सिद्ध करते हुये, टॉड-राजस्थान में की उक्त 'अजब कहानी' को बिलकुल बेबुनियाद, मनघटित, कपोलकल्पित, और सर्वथा मिथ्या सिद्ध कर देने के साथ-साथ 'टॉडसाहिब की

---

* इस समय अजमेर कुष्णगढ़ आदि में जो कोई पुष्करण ब्राह्मण बसते भी हैं, तो थोड़े ही वर्ष हुए कि भारत आकर बसे हैं। और पुष्कर जी पर तो तीर्थों के पंडे (पुष्करणों के तीर्थ गुरु) बसते हैं, वे पुष्करणे ब्राह्मणों की जाति में से नहीं और न पुष्करणों की जाति से उनकी जाति का कुछ संबंध ही है।

भूल' भी स-प्रमाण स्पष्ट सिद्ध कर दी गई है। यथा -

'नाहरराव पड़िहार के वक्त में पुष्करणों की उत्पति होना भी गलत है क्योंकि नाहरराव से कई सौ वर्ष पहिले देवराज भाटी हुआ है। उसके ज़माने में पुष्करण थे। बल्कि उसके पुरोहित रतना से रत्नू चारणों की जाति पैदा हुई हैं। और रतना का भानजा एक चोहटिया जोशी था, वह रत्ना के चारण हो जाने के पीछे उसका पुरोहित हो गया, सो अब तक रत्नू चारणों की विरति (वृति-पुरोहिताई) चोहटिया जोशियों की चली आती हैं। इससे साबित होता है कि पुष्करणों ब्राह्मण नाहरराव क्या, देवराज भाटी से भी पहिले से हैं।

महाजन वंश मुक्तावली की द्वितीयवृति पृष्ठ 110 में भी स्पष्ट लिखा है कि -

टॉडसाहब ने राजपूताने के इतिहास में पुष्करणों का ओड़ों से ब्राह्मण होना लिखा है, यह बिना विचारे लिखा गया है, पुष्करणे सनातन हैं, नूतन नहीं हैं। ... दूसरे ब्राह्मण श्रीमाली छःन्यात वाले कहते हैं कि पुष्कर खोदने से ओड़ों को ब्राह्मण करा, यह वार्ता असत्य है, यह वार्ता द्वेष से बाकी ब्राह्मणों ने शुरू की हैं। इसी प्रकार नदिया शान्तिपुर के पण्डित कॉलेज के प्रधान आचार्य श्रीयुत पं० योगेन्द्रनाथ भट्टाचार्य, एम.ए. डी.एल. ने भी अपनी पुस्तक 'हिन्दू जाति और मत' के पृष्ठ 69 में लिखा है कि-

"The Pokarnas are very numerous, not only in every part of rajputana, but in Gujrat and sind also. They derive their, designation from the town of Pokarn which lies midway between Jodhpur an Jaisalmer. The Priests of pushkar are called "Pushkar&Sevakas" or the worshippers of lake. The Pokarna Brahananas have no connections whatever with the holy lake called Pushkar near ajmer.

भाषार्थ - पोकरणे ब्राह्मणों की संख्या बहुत अधिक है। वे केवल राजपूताने ही में नहीं हैं, वरन् गुजरात और सिंध में भी बहुत हैं। उनका यह नाम भी जोधपुर और जैसलमेर के बीच के पोकरण गाँव से पड़ा है। पुष्कर के ब्राह्मणों का नाम पुष्कर सेवक (भोजक) है। इन पोकरणे ब्राह्मणों का सम्बन्ध अजमेर समीपस्थ पुष्कर क्षेत्र से किञ्चित् भी नहीं है। (देखो - ब्राह्मण निर्णय पृष्ठ 379)

'ब्राह्मण निर्णय' पुस्तक में ब्राह्मणों की कितनी ही जातियों पर लगाये हुए मिथ्या आक्षेपों का दिग्दर्शन करा कर, उनको द्वेषी समुदाय की द्वेष भरी लीला मात्र सिद्ध की हैं। उसी में लेखक ने पुष्करणा जाति पर लगाये हुए पुष्कर खोदने के मिथ्या आक्षेप को भी कितने ही अन्यान्य इतिहासों के प्रमाणों से मिथ्या सिद्ध कर दिया है, और अपना यह निर्भीक निर्णय दिया है कि .... जो प्रमाण हम देंगे तथा हमारे बीस वर्ष के जाति अन्वेषणाधार से जो कुछ हमें निश्चय हुआ है, तदनुसार

हम कह सकते हैं कि उपरोक्त (टॉड साहिब आदि के) लेख मिथ्या और भ्रम युक्त हैं क्योंकि भारतवर्ष में मुसलमानी अत्याचारों द्वारा बड़े बड़े प्राचीन पुस्तकालयों का अध:पतन और नष्ट-भ्रष्टता बड़े बड़े पुस्तक-भण्डारों के जलाये जाने आदि कारणों से सच्चे इतिहासो का (एक प्रकार) अभाव सा होकर (बहुधा)मन घड़न्त और सुनी सुनाई बातों पर ही ऐतिहासिक सामग्री का दारमदार रह गया था। ऐसे ही अन्धकार के समय टॉड साहिब ने 1835 में यह ग्रन्थ बनाया था .... और उसको प्राचीन इतिहास समझ कर अन्य ग्रन्थकारों ने भी मक्षिका स्थाने मक्षिका (मक्खी की टाँग की जगह मक्खी की टाँग) लिख मारो, और उसके सत्यासत्य के अनुसंधान का कोई भी प्रयत्न नहीं किया।....... परन्तु 'भूल करना मनुष्य का स्वाभाविक धर्म है' की कहावत के अनुसार ही पुष्करणे ब्राह्मणों का संबंध पुष्कर क्षेत्र से बतालाने में भी यह बड़ी भूल हुई है; क्योंकि जिस प्रकार पुष्कर का दुसरा नाम पोहकर है उसी प्रकार जोधपुर राज्य में जोधपुर और जैसलमेर के बीच 'पोकरण' नामक एक कस्बा है। वही इनका मुख्य निवास स्थान होने के कारण ये लोग अन्यान्य दूर-दूर देशों में जाकर पोकरणे ब्राह्मण कहलाये जाने लगे। परन्तु चूँकि पोकरण तो एक साधारण सा ही (और बहुध अपरिचित) कस्बा था और इधर इसी नाम वाला पोहकर (पुष्कर क्षेत्र) एक प्रसिद्ध तीर्थ था, अतएव सर्व साधारण जन समुदाय इन ब्राह्मणों का संबंध इसी प्रसिद्ध पुष्कर क्षेत्र से ही समझने लग गया और तदनुसार ही मि० टॉड ने भूल की, और तिस ही की देखा देखी अन्य दो चार विद्वानों ने भी भूल कर दी है।....... यदि ये ब्राह्मण इसी पुष्कर क्षेत्र के होते तो इनका 'पुष्कारिये' वा 'पोहकरिये' होता। परन्तु ऐसा नही हुआ, किन्तु ये 'पुष्करणे' वा 'पोहकरणे' प्रसिद्ध हुए इससे भी प्रतीत होता है कि .... जोधपुर राज्य 'पोहकरण' कस्बे ही से इनका घनिष्ठ संबंध होने के कारण ये पोकरणे कहलाये। (जैसे पाली से पल्लीवाल, श्रीमाल से श्रीमाली, साचोर से साचोरा, ब्राह्मण आदि लेखक।)... यदि इनका संबंध अजमेर समीपस्थ पुष्कर क्षेत्र ही से होता तो अजमेर एकस्ट्रा असिस्टेण्ट कमिश्नर पण्डित महाराज कृष्ण जिन्होंने मि० (अब 'सर') जॉन डिग्स लाटूश साहब की आज्ञा से ...... अजमेर और पुष्कर का इतिहास लिखते हुए जहाँ पुष्कर की अन्यान्य जातियों का पूर्ण विवरण लिखा है, वहाँ इनका भी अवश्य लिखते........ अतएव उपरोक्त अनेकों प्रमाणों के आधार और लोक मतानुसार हम भी अपनी सम्मति में इस जाति को शुद्ध ब्राह्मण जाति मानते हैं, और निश्चय पूर्वक लिखते हैं कि पुष्कर क्षेत्र के खोदने का संबंध इन ब्राह्मणों से तनिक सा भी नहीं हैं। (ब्राह्मण-निर्णय पृष्ठ 377 स 384)

पुष्करणों की उत्पति जैसे पुष्कर से मानने वालों ने भूल की है वैसे ही इनकी उत्पत्ति पोकरण से मान लेने में भी भूल ही है। जिस प्रकार अन्यान्य ब्राह्मणों की उत्पति गोत्र प्रवर्तन अन्यान्य ऋषियों से हुई है उसी प्रकार पुष्करणे ब्राह्मणों की उत्पत्ति भी उन्हीं गोत्र प्रवर्तक ऋषियों में के 14 ऋषियों के कितनेक संतानों से हुई है जो इन के 14 गोत्रों के नामों से स्पष्ट है। इनके पूर्वज सिंध देश मे निवास करते थे। वहाँ से श्रीमाल (भीनमाल) में आये और वहाँ से मारवाड़ के स्थल प्रदेश में आकर बस गये। इन बसने वालों में प्रधान पुरूष का नाम पुष्कर ऋषि था इसलिए उन के बसाये हुए उस नगर का नाम भी उसी ऋषि के नाम पर 'पोकरण' प्रसिद्ध हो गया । फिर कालान्तर में भैरवे राक्षस के उपद्रव के समय वहाँ के ब्राह्मण उस पोकरण नगर को छोड़कर अन्यत्र जहाँ तहाँ जा बसे। किन्तु वे गये थे पोकरण नगर से इसलिए बाहर वाले लोग इन को पोकरण के ब्राह्मण कह कर संबोधन करने लग गये। जिससे इनका नाम 'पोकरण ब्राह्मण' प्रसिद्ध हो गया जिसका वृत्तान्त इस भाग के परिशिष्ट में विस्तार से लिखा गया है। इससे स्पष्ट है कि इनकी उत्पति पोकरण से न होकर इनका केवल नामकरण पोकरण से हुआ है जैसे- पाली से पालीवाल का, श्रीमाल से श्रीमालियों का, साचोर से साचोरों का नामकरण हुआ है वैसे ही पोकरण से इनका नाम पोकरण हुआ है।

पुष्करणों संबंधी उक्त भूल को प्रकट करने के लिए हमने भी 'पुष्करणे ब्राह्मणों' की प्राचीनता विषयक टॉड-राज-स्थान की भूल' नाम एक वृहत् पुस्तक सं० 1966 में प्रकाशित कर के स्वजाति सेवा में भेंट की थी, जिस में स्वयं 'टॉड राजस्थान' ही के प्रमाणों के अतिरिक्त 'तावारीख जैसलमेर' रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज्य मारवाड़ 'तवारीख अजमेर' आदि अन्यान्य कितने ही प्राचीन इतिहासों से सिद्ध कर दिया था कि पुष्कर खुदने से सैकड़ों ही वर्ष पहिले ही से पुष्करणे ब्राह्मण पँवार, पड़िहार, वाराह, भाटी, आदि आदि राजाओं की पुरोहिताई करते हुए मारवाड़ में विद्यमान थे, और यही नहीं वरन् मारवाड़ में आने से पहिले भी इनके पूर्वज सिन्ध देश में निवास करते थे।

ऊपर लिखी ऐतिहासिक सत्य घटनाओं के प्रमाणों से टाँड साहिब की भूल, उनका अनुकरण करने वालों की अन्धपरम्परा और पुष्करणे ब्राह्मणों की प्राचीनता पाठकों पर भले प्रकार से प्रगट हो गई होगी। अतः इस विषय में अधिक लिखने की आवश्यकता कुछ भी नही रह जाती। यदि किन्हीं सज्जनों को अधिक जानना हो तो हमारी प्रकाशित की हुई "पुष्करणे ब्राह्मणों की प्राचीनता विषयक टॉड-राजस्थान की भूल" नामक वृहत् पुस्तक देखें।

परिशिष्ट

पुष्करणे ब्राह्मणों के पूर्वजों के बसाये हुए पुष्करण (पोकरण) नगर का वृत्तान्त ।

गणेशं च गिरं नत्वा, नत्वा च पुष्करं मुनिम् ।
पुष्करण पुरोत्पतिं, वर्णयाम्यानु पूर्विकाम् ।।

सम्पूर्ण विघ्नों के नाश करने वाले श्रीगणेशजी महाराज को और सम्पूर्ण विद्याओं की दात्री श्री सरस्वती भगवतीजी को नमस्कार करके, और नगर को बसाने वाले पुष्करणे ब्राह्मणों के पूर्वजों के समूह के प्रधान पुष्कर पुरुष ऋषि को भी नमस्कार करके, 'पुष्करण (पोकरण)' नगर के बसाये जाने आदि का प्राचीन ऐतिहासिक वृत्तान्त क्रमपूर्वक वर्णन करता हूँ।

अस्मिन् भारत वर्षे च, देशो वै मरूधन्वकः ।
तस्यान्तरे च नगरो, नाम्ना पुष्करणः शुभः ।।
पोकरणं च तन्नाम, वदन्ति प्राकृता जनाः ।
पुरस्य तस्य चोत्पत्तिः, कथिता च पुरातनैः ।।
सारांश तस्य संगृह्य, श्लोकबद्धं करोम्यहम् ।
सर्वेषां सु हितार्थाय, विदुषां मोद कारकम् ।।

इस परम पवित्र भारत भूमि में 'मरूस्थल (मारवाड़) नामका एक देश है। उस में 'पुष्करण' नामका एक प्राचीन नगर है, जिसको सर्व साधारण लोग 'पोकरण' भी कहते हैं। उसके बसाये जाने आदि का प्राचीन इतिहास लोक भाषा में विस्तार से वर्णित है।* उसके सारांश को संग्रह करके श्लोकबद्ध करता हूँ, जो मारवाड़ी आदि सर्व जनता के तो हितकर होगा और ऐतिहासिक विद्वानों के आनन्ददायक होगा।

(प्राचीन इतिहास लेखक सुप्रसिद्ध मोहनोत नयनसी (नैणसी) ने जिसको मूता नैणसी भी कहते हैं, वि०सं० 1705 से 1725 तक एक वृहत् इतिहास, जो आज से 275 वर्ष पहिले की मारवाड़ी भाषा में संग्रह किया था, जो 'मुँहणोत नैणसी की ख्यात' के नाम से प्रसिद्ध है, इस दुर्लभ ग्रन्थ को काशी नागरी-प्रचारिणी सभा ने हिन्दी भाषा में पृथक-पृथक भागों में प्रकाशित करना प्रारम्भ कर दिया है। उन्हीं नैणसी ने जोधपुर राज्य का सर्व संग्रह (गेज़टियर-जुगराफ़िया) भी बहुत विस्तार से लिखा था, जो नैणसी की ख्याति का दूसरा भाग समझा जाता है। वह बड़े आकार के 2000 पृष्ठों की वृहत् पुस्तकें जो अधावधि हस्त लिखित ही कहीं-कहीं उपलब्ध हो सकती है, हमारे पूर्वजों के स्थापित प्राचीन पुस्तकालय पाली में भी प्रस्तुत है। उसमें भी इस ''पोकरण'' नगर को प्रारम्भ में पुष्करणे ब्राह्मणों के पूर्वजों के श्रीमाल नगर से आकर वसाने, वालों में प्रधान पुरुष 'पुष्कर' नामक ऋषि होने से इसका नाम 'पुष्करण' वा 'पोकरण' होने, तथा कालान्तर में भैरव राक्षस के भय से सूना होने, फिर पीछे से तुँवर रामदेव जी 'पीर' द्वारा पीछा आबाद होने, आदि का वृत्तान्त बहुत विस्तार से लिखा है।)

पुराकाले च ये विप्राश्चतुर्दश सु गोत्रजा : ।
शापानुग्रह कर्त्तारः, प्रतिग्रह पराङ्मुखाः ।।
सिन्धुदेशेवसन्तिस्म चतुर्वेदविशारदा : ।

पूर्व काल में चारों वेदों के ज्ञाता भिन्न-भिन्न गोत्रों मे उत्पन्न हुये 2 ब्राह्मणों में से 14 गोत्रों में के (5000) ब्राह्मण सैन्धवारण्य में निवास करते थे। वे शाप देने तथा अनुग्रह करने की सामर्थ्य वाले और प्रतिग्रह लेने से प्रायः पराङ् मुख अर्थात् दान लेने की सामर्थ्य होते हुये भी अपने ब्रह्म तेज की रक्षा के लिए सदा दान लेने से अपने को बचाने वाले थे।

कालान्तरे च ते विप्राः क्षेत्रे श्रीमालसंज्ञिके ।
गतत्वालक्ष्मी समाराध्य, वरं प्राप्ता महत्तरम ।।
द्विजानां प्रार्थनाभिस्तु, लक्ष्मीः सावरदाऽभवत्।
किंवरं च तदा लक्ष्म्या, दत्तंतत्कथयामिवै ।।

कालान्तर में वे सैन्धवारण्य के ब्राह्मण भगवान् के दूतों द्वारा बुलाये जाने पर श्रीमाल क्षेत्र में गये थे । वहाँ अकेले गौतम ही की पूजा होने के प्रस्तावकों के साथ अपना मत न मिलने से वे पीछे लौट आये थे, किन्तु पीछे से श्री पुञ्ज राजा के बुलाने से फिर पीछे श्रीमाल क्षेत्र में जाकर उन्होंने श्री लक्ष्मीजी की स्तुति प्रार्थना की, जिससे प्रसन्न होकर श्री लक्ष्मीजी ने उन्हें महान् वर प्रदान किया था । वह वर इस प्रकार है –

उदारा, राजापूज्याश्च, शुद्धाः, सन्तोषिणः सदा।
ब्राह्मणानां पुष्टिकरा, धर्म पुष्टिकरास्तथा ।।
ज्ञान पुष्टिकरास्तस्मात्, पुष्करणाख्या भविष्य थ।।

श्रीलक्ष्मी जी ने कहा कि 'हे सैन्धवारणय के ब्राह्मणों' तुम उदार, राज्य पूज्य, शुद्ध, सन्तोषी, ब्राह्मणों की पुष्टि करने वाले, धर्म की पुष्टि करने वाले, और ज्ञान की पुष्टि करने वाले होओगे। इसलिए तुम 'पुष्करणे' कहलाओगे।

महालक्ष्मी मुखाम्भोजा-न्निःसृतं वर मुत्तमम् ।
ततः प्रभृति ते विप्राः ख्याता 'पुष्करणा' भुवि ।।

श्री लक्ष्मीजी के मुख रूपी कमल से उक्त वर प्राप्त हुआ तब से सैन्धवारण्य के ब्राह्मण 'पुष्करणे' नाम से प्रसिद्ध हुये ।

एतत्कथानकं सर्व, विस्तरेण पुरातनम् ।
पुराण स्कन्द श्रीमाल-खण्डे निगदितं शुभम् ।।

उपरोक्त वृत्तान्त की पुरातन शुभ कथा स्कन्द पुराण के श्रीमालखण्ड में

(अर्थात् श्रीमाल माहात्म्य नामक श्रीमाल पुराण में,) विस्तार से वर्णित है, जिसका संक्षिप्त सारांश इसी पुस्तक के 'शास्त्र संग्रह' नामक भाग में दिया गया है।

ते लक्ष्म्याश्च वरं प्राप्ताः, केचिद्गत्वा स्वदेशके ।
अपरे चावशिष्टास्ते, मरुस्थलक माययुः ।।

श्री लक्ष्मीजी के वर प्रदान को प्राप्त कर कितनेक ब्राह्मण तो पीछे अपने स्वदेश-सैन्धवारण्य में चले गये, और जो कितनेक पीछे रहे वे मरूस्थल (मारवाड़ के निर्जल प्रदेश) में आ गये।

ये यताश्च मरूस्थल्यां, द्विजाः शास्त्र विशारदाः ।
तेषां मध्ये ज्ञानि जनः कर्मकाण्ड विशारदः ।।
शब्द शास्त्रस्य कर्त्ता च, शास्त्रज्ञानां शिरोमणिः ।
आचार्य वंश सं जातः, पमाराणां पुरोहितः ।।
सौजन्य सागरो धीमान्, सर्वेषामुपकारकः ।
'पुष्करेति' च तन्नाम, विख्यातं देश मण्डले ।।

पुष्करणे कहलाये जाने वाले सैन्धवारण्य के ब्राह्मणों में से जो मारवाड़ के निर्जल प्रदेश में आ गये, उन शास्त्रों के ज्ञाता ब्राह्मणों के समूह में प्रधान पुरुष 'पुष्कर' नामक ऋषि था। वह बड़ा ज्ञानी बुद्धिमान्, कर्मकाण्ड का परम ज्ञाता, व्याकरण शास्त्र का कर्त्ता, *पौष्कर आदि व्याकरण का कर्त्ता उक्र पुष्कर ऋषि है। इस व्याकरण का प्रमाण भट्टोजि दीक्षित ने सिद्धान्त कौमुदी के हल सन्धि विषयक सूत्र 8।3।28। के वार्त्तिक में दिया है। यथा ''चयो द्वितीयाः शरि 'पौष्कर सादे' रितिवाच्यम्''।

पुष्कर ऋषि के वंश वाले पँवार राजपूतों की पुरोहिताई सदा से करते चले आए हैं। इनके पूर्वजों को लुइवा नगर के पँवार राजा वीरसिंह ने सं० 531 में 'काहला' नामक एक गाँव दान दिया था। पीछे से उन्होंने वह गाँव अपने सवास ने गज्जा जाति के पुष्करणें ब्राह्मणों को संकल्प कर दिया था जो अधावधि उनके आधीन हैं, जिसे मिले आज 1455 वर्ष हो गये हैं। (देखो जैसलमेर की तवारीख़ के पृष्ठ 136 में परगने जैसलमेर के गांव नम्बर 52 वें की क़ैफ़ियत।)

सब के साथ प्रेम से बर्त्तने वाला, परोपकार आदि गुणों से युक्त होने से देश भर में सर्वत्र प्रसिद्ध था।

---

* शास्त्र के ज्ञाता विद्वानों में शिरोमणि, राजाओं से प्राप्त आचार्य, पद वालों का वंश भूषण, पमार जाति के राजाओं का वंश परम्परा से कुल पुरोहित गम्भीर हृदय,

समुनिर्वासमकरो-द्देशे परमसुन्दरे।
नीरोगो, बलवान्, स्वस्थः, सर्वतु सुखकारकः।
सदेशो वै जला भावा द्दुःखदस्तत्र वासिनाम् ।।

उस पुष्कर ऋषि ने आकर जिस प्रदेश में निवास किया था, वह प्रदेश वैसे तो परम सुन्दर, रोग रहित, बलदायक और सब ऋतुओं में सुख देने योग्य था, परन्तु वहाँ पर एक त्रुटि बड़ी भारी थी, अर्थात् जल का अभाव था, क्योंकि जल बहुत गहरा (ओंडा) था जिससे वहां बसने वालों को जल का कष्ट भोगना पड़ता था।

जलेन पीडितान् दृष्ट्वा, जनान् तत्र द्विजोत्तमः।
वारि बाधा निवृत्यर्थ, वरूणाराधनं गतः।।
दीर्घकाले समुत्पन्ने, प्रसन्नो भूदपांपतिः ।।
जगाद वचनं तस्मै, विप्राय च महात्मने ।।
तपसा दीर्ध कालस्य, प्रसन्नोस्मि तवोपरि।
वरं ब्रूहि, वरं ब्रूहि, वाञ्छितं सुमनोहरम् ।।
प्रोबाच वरूणं विप्रो, दे हिमे वाञ्छितं चरम्।
आस्मिन देशे वारि बाधा, न भवेत् कृपया प्रभो।।
श्रुत्वावरं सु विप्रस्य, पुष्करस्य महात्मनः ।
प्रो वाच वचनं तस्मै, विमलं सु मनोहरम ।।
वरदत्तं मया तुभ्यं, सु प्रसन्नेन चेतसा।
भविष्यति जलं मिष्टं, यावदा भूत संप्लेव ।
एतत्तीर्थ हि विख्यातं, नाम्ना तब भविष्यति ।
दत्वा वरं सु विप्राय ययौ देवोह्यपांपति ः।।
तस्यैव वरदानेन, सजातं सजलं स्थलम्।
दसहस्तादयो भागे, जातं वै विपुलं जलम् ।।

वहां लोगों को जल का कष्ट भोगते देख कर उक्त पुष्कर ऋषि ने इस जल कष्ट को मिटाने के लिए वरुण देवता की एकंत जाके वेद मन्त्रों द्वारा आराधना करते रहने से वरूण देवता ने प्रसन्न होकर दर्शन देके इन्हें इच्छित वर माँगने को कहा। तिसपर पुष्कर ऋषि ने इस प्रदेश में जल का कष्ट न रहने का वर माँगा। तब वरूण देवता ने इस भूमि में प्रचुर और स्वादिष्ट मिष्ट जल हो जाने का वर देने के साथ साथ यह वर भी दे दिया कि यह स्थान तेरे नाम के साथ तीर्थ प्रसिद्ध हो जावेगा ऐसे वर देके अदृश्य हो गये। वरूण के इस वर के प्रताप से इस स्थल में एक कोस के भीतर-भीतर दश ही हाथ के नीचे जल हो जाने से वह निर्जल स्थान सदा के लिए

सजल स्थल हो गया। तथा वह स्थान भी उक्त ऋषि के नाम पर 'पुष्कर' नाम से तीर्थ प्रसिद्ध हो गया।

निर्मलञ्च जलं दृष्टा, सुस्वाद परमोत्तमम् ।
प्रसन्नस्तेजना विप्राः मरूस्थलनिवासिनः ।।
स्तुवन्तः पुष्करं विप्र, कृतमेतच्छुभं त्वया ।
पक्षिणां च पशूनाश्च जनानां सुखदायकम् ।।

पुष्कर ऋषि के प्रभाव से इस प्रकार निर्मल स्वादिष्ट परम उत्तम जल का सुभीता हुआ देखकर वहाँ बसने वाले ब्राह्मण तथा अन्यान्य लोग बहुत प्रसन्न हुये, तथा पुष्कर ऋषि की भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे कि वह आप ही का प्रताप है कि ऐसा निर्जल स्थान भी सजल स्थान हो गया है, जिससे पशु, पक्षी तथा मनुष्य सुख भोग रहे है।

श्रुत्वा देव वर विप्रा, आयाता देश देशतः ।
पुष्करस्य मुनेश्चित्र घोषणां कुर्वतः सदा।।
तस्मात्समीप देशीया, निर्जल स्थल वासिनः ।
सकुटुम्बाः समायाताः सजल स्थल कारणात्।

वरूण के वर प्रदान से इस प्रकार जल का सुभीता हो जाने की पुष्कर ऋषि की आश्चर्यजनक घटना को सुनकर दूर दूर के लोग इसको देखने तथा ऋषि के दर्शन करने के लिए आने लगे। उन आने जाने वाले लोगों ने इस बात को सर्वत्र फैलादी, जिससे निकट प्रदेश के कितने ही लोग कुटुम्ब सहित आ आकर वहाँ पर बसने लग गये ।

तूलकारा, वायकार, वंश कारा तथाऽपरे।
स्वर्णकारा, लोहकाराः, खनकाश्चोप जीविनः ।।
धनिका, गणिकाश्चैव रञ्जकाराश्च, मालिनः।
तत्र देशे समायान्ति, ह्यन्येपि कर्मकारिणः ।।

(*पहिले वह स्थान पुष्कर नाम का तीर्थ था। किन्तु समय सदा एकसा नहीं रहता, अतः मण्ढोवर के राजा नाहरराव पड़िहार ने पुराणा पुष्कर तीर्थ, जो बहुत काल से रेती में दटा हुआ था, उसको सं० 1212 में खुदवा कर 12 पक्के घाटों सहित बड़ा भारी। तालाब बना दिया, जिससे उसकी विशेष प्रसिद्धि हो जाने से इसकी महिम लुप्त होती गई । फिर भैरव राक्षस के उपद्रव के समय यह स्थान सूना हो जाने से तीर्थ के निमित्त लोगो का आना जाना भी बन्द हो गया था, और इसके उपरान्त तुँवर रामदेव जी सिद्ध पुरूष ने इस स्थान से तीन कोस की दूरी पर रूणेचा ग्राम में स० 1515 में जीवित समाधि ले लेने से उस स्थान पर प्रति वर्ष भाद्र मास में बड़ा भारी मेला प्रारम्भ हो जाने से अब लोग इसे तीर्थ नाम से पहिचानना ही भूल गये।)

ऐसे ही जल का सुभीता देखकर रूई का काम करने वाले, कपड़ा बुनने वाले, बांस का काम करने वाले, सुनार, लोहार, कन्सारे, कुम्भार, धन वाले, वेश्याएँ, रंगने वाले, माली, नाई, दरजी, तेली तम्बोली, मोची, आदि विविध प्रकार के कार्य करने वाले लोग यहाँ बसने के लिए आने लगे।

नटानर्त्तक वेताला, भाण्डाश्च हास्यकारकाः ।
सर्वे समाययुर्ज्ञात्वा, जीवनं जल मेवहि ।।

इसी प्रकार जल को जीवन का मूल समझ कर नाचने तथा गाने वाले, नट (खेल तमाशे करने वोल) भाँड (नकल करने हँसाने वाले), लोगों को प्रसन्न करके जीविका करने वाले आदि भाँति के लोग भी आकर बसने लगे।

उष्ट्राननडुहश्चैव, महिषीर्महिषान् पुनः ।
अजाविका समूहाँश्च, तुरगान् गोधनानिच ।।
गृहीत्वाते जनास्तत्र, सजल स्थल माययुः ।।

इस प्रकार जल का आराम देखकर ऊँटों बैलों, भैंसियों भैंसों, बकरियों, भेड़ों, घोड़ों और गायों वाले लोग अपने-अपने पशुओं के समूहों को ला ला कर बस जाने लगे।

क्रयविक्रयकर्त्तारो,ह्यनेकानेकवस्तुनाम्।
तेपितत्र समायाता, अनेके व्यवहारिण :।।

इस प्रकार लोगों की बस्ती बढ़ती देखकर अनेक प्रकार की वस्तुओं के क्रय विक्रय करने वाले नाना प्रकार के व्यापारी भी आ आ कर बसने लगे ।

आपण्यश्च निकेतानि, स्वरूच्या निर्मिता नितै :।
विचित्र चित्र शोभाढ्याः शिल्प विद्या प्रकाशकाः।।
शरदभ्र समाभासा, नेत्रानन्द प्रदायकाः।
अनेक वस्तु व्यापारो हर्निशं वर्द्धते ततः ।।

जो लोग वहाँ आ आ कर बसने लगे, उन लोगों ने अपने रहने के लिए तो मकान और व्यापार के लिए दूकाने यथा स्थान अपनी-अपनी रूचि के अनुसार बनवाई जो चित्र विचित्र प्रकार की और शिल्पकला को प्रकाश करने वाली तथा शरद ऋतु के श्वेत बादलों के समान अति उज्जवल नेत्रों को आनन्द देने योग्य थी। और वहाँ पर रात दिन अनेक प्रकार के व्यापार की वृद्धि होने लगी ।

जलान्न वस्तु वस्त्रादि, प्राप्तिः स्वल्प श्रमेणतु ।
तेनवृद्धि समुत्पन्ना, स्वल्प काले न तत्स्थले ।।
नगराकार एतत्तु, स्थलं जल विभावतः ।
किंचित्काल गते नैव, विशालं नगरं ह्य मूत् ।।

इस स्थान पर जल, अन्न, और वस्त्र आदि सर्व प्रकार की वस्तुएँ बहुत थोड़े श्रम से प्राप्त हो जाने लगीं। जिसके कारण थोड़े ही समय में इस स्थल पर लोगों की इतनी वृद्धि हो गई कि जिससे इस स्थान ने एक नगर का रूप धारण कर लिया, और इस प्रकार वृद्धि होती रहने से कालान्तर में तो यह एक बड़ा भारी नगर ही हो गया।

ऋषेः पुष्करनाम्नस्तु, प्रभावात्तत्पुरस्पवै।
'(पुष्करण)' इतिख्यातः, पुरः पुष्करनामतः।।
बहुकाले व्यतीतेतु भाषाया मन्तरं गतः।
पोकरण श्चाति विख्यातः, शोभते द्विजसत्तमैः।।

यह नगर पुष्कर ऋषि के प्रताप से जलका सुभीता हो जाने के कारण बसा था, इसलिए लोगों इस नगर का नाम भी उसी ऋषि के नाम पर पुष्करण नगर प्रसिद्ध कर दिया था, जो बहुत समय तक तो इसी नाम से प्रसिद्ध रहा, किन्तु कालान्तर में भाषा, भाषियों द्वारा परिर्वतन होते होते इसका नाम पोकरण पड़ गया।

पुष्करण पुरे नित्यं, वंशवृद्धिश्च पुष्कला।
धनवृद्धिर्धान्यवृद्धिः, फलवृद्विर्निरन्तरा।।
अनेक सुख संवृद्धिः, परमानन्दंदायिनी।

इस नगर के लोगों के पुण्यप्रताप से वंश की वृद्धि, धन की वृद्धि, धान्य की वृद्धि, नाना प्रकार के फलों की वृद्धि एवं परम आनन्ददायक अनेक प्रकार के सुखों की वृद्धि निरन्तर होने लगी।

नित्योत्सवं मन्दिरेषू, कौतुकं, पुरवीथिषू।
गृहे गृहे च संगीतं, मङ्गलं युवती जने।।
सदानन्दैकरसिकाः वस्त्रभूषणभूषिताः।
जनानां युवतीनां च, समूहास्तत्रवै शुभाः।।
आरामाणिह्यनेकानि, फलपुष्पयुतैर्द्रुमैः।
शोभितानि सुबापीभि, कूपैश्च सुन्दरैर्वन।।

लोगों के घरों में नित्य नये उत्सव होने लगे, स्त्रियों में मागंलिक उत्सवों की वृद्धि होने लगी, घर-घर में गाना बजाना आदि द्वारा आमोद प्रमोद होने लगा, वस्त्राभूषणों से प्रसन्न रहने लगे, नगर के अन्दर राज मार्ग में चित्त को प्रसन्न करने वाले, कौतुक के खेल तमासे होने लगे, इसी प्रकार कूए, बावड़ी तालाब, बगीचे आदि नगर की शोभा बढ़ाने लगे,

कचिदन्दूभि निर्घोषं वेदघोषं षडंगकम् ।
पुराणपठनं तत्र,भारतादि कथानकम् ।।
विदुषां च सभा नित्यं, नित्यं वृद्धोपजीविनाम् ।
नटानां, नर्त्तकानां च, सदोत्सवमहाध्वनिः ।।
बभूव पुरमध्येतु, नित्योत्साह महर्निशम् ।

नगर में कहीं तो अनेक प्रकार के बाजे बजते थे, कहीं षडङ्ग सहित चारों वेदों का स्वाध्याय होता था, कहीं पुराणों का पाठ होता था, कहीं महाभारत रामायण आदि की कथाएँ होती थी, कहीं विद्वानों की सभाएँ होती थी, कहीं वृद्ध पुरूषों का सत्संग होता था कहीं नटों का तथा नर्त्तको का खेल पुरूषों का सत्संग होता था, कहीं नटों का तथा नर्त्तकों का खेल तमाशा होता था इस प्रकार रात दिन नित्य नये उत्सव होते थे।

श्रीमद्भारतमराडलानतरगतो, देशोहि मारूस्थले ।
नाम्ना पोकरणः पुरो विजयते, भूमण्डले चन्द्रमाः ।।
कृपोद्यानतडागहंसवकुलैः संशोभितः पक्षिभिः ।
नाना पुष्पफलैः सुवृक्ष वटिका, शान्तै मृंगैःसेवितम् ।।
लक्ष्मयाः प्राप्तवैरः पुरं द्विजवैर, संस्थापित तत्रवै।
तद्देशस्थजनाः सुधर्म निरताः, सत्कर्मसुव्यापृताः ।।
व्यापारादिविशाल कर्मनिरताः स्त्रीयैगुणैः शोभिताः।।
येदेवान् जप होम यज्ञ करणैः, सन्तौषयन्तः सदा।।

भारत देशान्तर्गत मरूस्थल प्रदेश में 'पुष्करण' वा पोकरण नामक नगर भूमण्डल में चन्द्रमा के समान शोभायमान था। वह नगर कूए, बावड़ो, तालाब, वाग, बगीचे आदि से युक्त हंस, सारस, बगुले आदि पक्षियों से शोभित अनेक प्रकार के फल पुष्प वाले वृक्षों से वेष्टित, वाटिकाओं से शोभायमान गवादि शान्त पशुओं से युक्तः लक्ष्मी जी से वर प्राप्त करके वहाँ आकर इस नगर को बसाने वाले ब्राह्मण तथा अन्यान्य लोग स्वधर्म में रत, सतकर्म करने में श्रद्धालु व्यापार आदि महान कर्म में रत अपने-अपने गुणों से विभूषित और जप, होम, यज्ञ आदि द्वारा देवताओं को सदा प्रसन्न रखने वाले थे।

अस्मिन् देशेयदा धीमान् ऋषिः पुष्कर आगतः ।
तदा पमारजीनां, राज्य सर्वत्र वर्त्तते ।।

जिस समय पुष्कर ऋषि आकर यहाँ बसा था, उस समय इस प्रदेश में भी सर्वत्र पँवार जाति के राजाओं का राज्य था।

कालान्तरे पुराधीशस्तत्र राजा पुरूरवाः ।
परमारकुलोत्पन्नः, क्षत्रियाणां शिरोमणिः ।।
आसीत्सर्वगुणग्राही, प्रजारञ्जनमानसः ।।
धीमान्, शुरः, कृतज्ञश्च, विजयी, सदगुणार्णवः ।
राज्य चकार विधिवत्, प्रख्यातो भूमि मण्डले ।

बहुत समय पीछे इस नगर का स्वामी पँवार जाति के राजपूतों का कूल भूषण तथा क्षत्रियों में शिरोमणि 'पुरूरवा' नामक राजा हुआ। वह सर्व प्रकार के गुणों से युक्त, प्रजा को प्रसन्न रखने वाला, गुणाग्राही विजयी, और विधिवत् राज्य करने में भूमण्डल में प्रसिद्ध था।

सर्व सम्पत्समृद्धोऽपि, सन्तानाभावशोचकृत् ।
दीर्घकालसमुत्साही, सन्तानस्यतदाऽपिहि ।।
नाभूत्तस्य सुतोराज्ञः, कन्या चैकावराऽभवत् ।
सर्वार्यगुणासम्पना सर्वकार्यविशारदा ।।
भृगुगेहे यथा लक्ष्मी, स्तथा राजकुले च सा ।
सन्तोषञ्च सुसम्प्राप्तो, राजा कन्या सुजन्मतः ।।

पुरूरवा राजा सर्व प्रकार की राज्य समृद्धि आदि अनेक सुखों से युक्त होते हुए भी एक संतान के सुख से रहित होने से सदा ही चिन्तातुर रहता था। बहुत समय तक शोकातुर बने रहने पर भी पुत्र की आशा तो पूर्ण न हुई, किन्तु एक कन्या उत्पन्न हुई। इस कन्या के जन्म लेने ही से राजा को आधा संतोष हो गया। वह कन्या सर्व श्रेष्ठ गुणों से युक्त, सम्पूर्ण प्रकार के कार्य करने में चतुर, और जैसे भृगु ऋषि के गृह में लक्ष्मी जी ने जन्म धारण किया था, वैसे ही राजा के कुल में यह कन्या भी लक्ष्मी स्वरूपा हुई।

विवाहयोग्या साजाता, कन्या राजगृहे शुभे ।
यौवना सम्प्राप्ताः स्वात्मजां महिषी शुभाः।।
दष्ट्वावय चिन्तयामास, विवाहार्थ पतिं वरम्

जब कन्या के यौवनावस्था के चिन्ह प्रगट होने लगे तब उसको विवाह योग्य समझ कर, उसके विवाह की चिन्ता माता पिता को हो आने से वे उसके योग्य वर की खोज करने लगे।

तद्राज्ये स्थापितोह्येको, बालः सर्वगुणाश्रयः ।
नाम्ना नानग विख्यातः, शूरः क्षत्रिय वंशजः ।।
ददोराजा सु कन्यां वै, विधिवत् नानगाय च ।
विवाह मकरोत्तेन, कन्यायाः सुखकारम् ।।

पारिवर्हं गजानश्वान्, दासान्दासीस्तथै व च ।
सुवर्णं, रजतं, वस्त्रान् ददौराजा विधानतः ।
स्व समीपे च तं रक्षन्, पुत्रवत् कन्यकावरम् ।।

इस खोज से पता लगा कि अपने ही आश्रय मे क्षत्रियों के उच्च कुल में नानग नामक एक शुरवीर स्वरूपवान् युवा लड़का यहीं पर विद्यमान् है। उसको कन्या के योग्य देखकर उन्होंने शास्त्र विधि से अपनी कन्या का विवाह उसके साथ कर दिया। दहेज में हाथी, घोड़े, रथ, सोने के आभुषण, चांदी के बर्तन, वस्त्रादि बहुत सा धन माल दिया, और उस जमाई को आपने पास पुत्रवत् रख लिया।

पुरूरवा राज्य सुखं, महिष्या बुभुजेकिल ।
वृद्धत्वंस्वस्य सम्प्राप्तं दृष्टार्द्धाङ्गी मुवाचह ।।
कन्यावराय स्वं राज्यं दातु में मानस स्मृतिः ।
प्रसन्नासाऽपितेनैव, वाक्येन तस्य भू भुजः ।।

राजा पुरूरवा अपनी रानी के साथ बहुत समय तक राज्य का सुख भोगता रहा। फिर राजा ने अपनी वृद्धावस्था प्राप्त हुई देखकर रानी से कहा कि मेरी इच्छा है कि राज्य का स्वामी अब कन्या के वर नानग को बना दिया जावे। राजा की यह बात रानी को भी प्रसन्द आ गई ।

राज्याधिकारिणः सर्वान् समाहूय सभासदः ।
वृद्धानमात्यानाहूय, विचार्यैवं महीपतिः ।।
अहं तु जठरो जातः, सन्यासाश्रम गोऽस्म्यहम् ।
को राजा वै प्रकर्त्तव्यों, यो राज्यं पालयेत्सदा ।।
नानगं गुण सम्पन्नं राज्यकार्यविशारदम् ।
महावीरं युद्धशूरं, शत्रूणां दलनेवरम् ।।
विचार्य मन्त्रिभिः सार्द्धं राजा भूपं चकारवै ।
राज्याभिषेकं कन्याया, वरस्य च चकारह ।।
ददौ छत्रं सुकृपया, सोपविष्टः समासने ।
पुष्पवृष्टिः कृता लोकैर्जयशब्द स्तदाऽभवत् ।।

फिर राजा ने इस विषय में अन्यान्य लोगों की सम्मति जानने के लिए राज्य के सम्पूर्ण अधिकारियों, सभासदों तथा वृद्ध मन्त्रियों, आदि को एकत्र करके उनके सामने यह प्रश्न रखा कि मेरी अवस्था वृद्ध हो गई है, मैं अब सन्यासाश्रम का सेवन करना चाहता हूँ , तो अब आप लोग विचार करें कि इस राज्य का स्वामी किसको बनाया जावे, जो सदा उचित रीति से राज्य का पालन कर सके। इस पर सम्पुर्ण

लोगों की भी यही सम्मति हुई कि आपका जमाई नानग ही सर्व प्रकार के राजाओं के गुणों से युक्त राज्य कार्य में चतुर, महावली युद्ध में शुर वीर और शत्रुओं का नाश करने में सामर्थ्यवान् होने से राज्य पाने के योग्य है, अतः आप इसी को राजा बनावें। तब राजा ने कन्या के वर का राज्याभिषेक करके छत्र चामर आदि राज्य चिन्ह देकर उसे राज्य सिंहासन पर बैठा दिया। उस समय सब लोगों ने प्रसन्न होकर जयघोष के साथ नानग पर पुष्पों की वर्षा की।

नानगोऽपि प्रतापीस्याद्राजा राज्यं सुदुर्लभम् ।
प्राप्यैवं नीतिचतुरः, पालयामास सु प्रजाः।।

नानग भी अपने श्वसुर से इस दुर्लभ राज्य को पाकर बहुत प्रसन्न हुआ, और प्रजा का पालन सुनीति से करने लगा, जिस से वह भी एक बड़ा प्रतापी राजा हो गया।

तस्य पुत्रः प्रतापीस्यान् , महाधवलकेशरी ।
चकार राज्यधर्मेण, मानदानकृपानिधिः।।

इस नानग के पीछे महाधवल नामक उसका पुत्र राजा हुआ। वह भी सिंह के समान महा पराक्रमी हुआ, और धर्मानुसार प्रजा का पालन करने में सदा प्रसन्न चित्त रहता था ।

कदाचिद्दैवयोगेन, दुष्टो भैरव राक्षसः ।
समायातस्तुतत्रैव, सर्वोपद्रवकारकः ।।
मनुष्य मांस सन्तुष्टश्चकार च नृणां वधम् ।।
सर्वेषां च समुच्चाट-स्तत्रवै पुरवासिनाम् ।।
राक्षसेनाति भीतास्ते शनैर्जस्मुः पुरात्ततः ।
स्वल्पकालेन नगरो, वास शून्योऽभवत्तदा।।
देशश्च निर्जनों जातो, भैरवस्य भये न च ।
कतिचिद्वर्ष पर्यन्तं, शून्यारण्य मिवा भवत् ।।

दैवयोग से कालान्तर में 'भेरवा' नामक एक दुष्ट राक्षस वहां उत्पन्न हो गया। * वह मनुष्यों का मांस खाने से बहुत संतुष्ट रहता था, अतः अपने भक्ष के लिए नगर में से नित्य एक न एक मनुष्य लेने लगा, और मुर्दो को भी जलाने न देकर आप ही ले जाकर उन्हें खाने लगा। इस प्रकार कई प्रकार के उपद्रव करने से लोगों को बड़ा उच्चाट हो गया, जिससे सब लोग इस राक्षस के भय से धीरे धीरे नगर छोड़कर

(सुनने में आता है कि वह 'भैरवा' राक्षस माहेश्वरियों की जाति में की 'भूतड़ा' जाति का महाजन था, किन्तु किसी अपराध के कारण किसी माहात्मा ने उसको राक्षस हो जाने की फटकार (दुराशिष्) दे दी थी, जिसके कारण उसकी प्रकृति राक्षसी हो गई थी।)

जहाँ तहाँ भाग जाने लगे, जिस से थोड़े ही समय में वह बड़ा नगर खाली होकर सूना हो गया, और निकट का प्रदेश भी भैरवे के भय से जंगल की भाँति उजाड़ हो गया, और कितनेक वर्षो तक वैसा ही सूना पड़ा रहा।

स्वल्पकाले व्यतीतेतु, ईश्वरस्येच्छया पुनः।
रामदेवप्रतापेन, तज्जा तं नव पत्तनम् ।।

फिर थोड़े समय के पश्चात ईश्वर की इच्छा से ओर रामदेव जी के प्रताप से वह सूना नगर पीछा नवीन नगर हो गया, अर्थात् पीछा बस गया, जिसका वृतान्त इस प्रकार है–

अनङ्गपाल वंशस्थो, वास्तव्यों जीलुपत्तने ।
तुँ वर्जातीयों राजन्योऽजपसी धीमतांवर ।।
धर्मज्ञः सत्य सन्धश्च, कृष्ण भक्ति परायणः।।
तस्यभर्यामालदे च, पत्युराज्ञानुवर्तिनी ।।
तस्याः पुत्रद्वयं जातं, तयोर्नाम सुकथ्यते ।
ज्योष्टों वीरमदेवश्च, कनिष्ठो रामदेवकः ।।
रामदेवो महाधीरो, नाना गुण विशारदः ।
शत्रूणां दलनेदक्षः सुहृदां प्रीति वर्धकः ।।
स्वदेशं च परित्यज्य, वासंकृत्वामरूस्थले ।

तुँवर महाराजा अनङ्गपाल के वंशजों से दिल्ली का राज्य ब्राह्मण राजपूतों ने ले लिया, तब तुँवर राजपूत वहाँ से इधर आकर बस गये। जिस प्रदेश में वे बसे थे वह प्रदेश 'तुँवरा वटी' के नाम से प्रसिद्ध हो गया, जो इस समय जयपुर के राज्य में है। वहाँ पर जीलूपाटण (जूंजाल नामक) ग्राम में रहने वाले तुँवर धनसी जी के पुत्र अजयसिंह जी जो अजमाल जी के नाम से प्रसिद्ध हैं, बड़े धर्मज्ञ सत्यपरायण तथा श्रीकृष्ण भगवान् के परम भक्त थे। इनकी स्त्री का नाम 'मालदे' थावह पति की आज्ञा में बर्तने वाली थी। इन के दो पुत्र हुए। बड़े नाम वीरमदेव और छोटे का नाम रामदेव था। रामदेव जी बड़े धीर अनेक गुणों से युक्त, शत्रुओं को दबाने में चतुर और मित्रों से प्रीति बढ़ाने वाले महान् अवतारी पुरूष थे। * ये अजयसिंह जी अपना देश छोड़कर कुटुम्ब सहित मारवाड़ में आकर बस गये थे।

---

* सुना जाता है कि रामदेव के पिता अजयसी जी के पुत्र न होने से एक दिन एक कृषक ने इनके शकुन नही लिए। इससे दु:खी होकर वे द्वारिका की यात्रा को चले गये। वहां श्रीकृष्णचन्द्र भगवान ने उन्हे दर्शन देकर पुत्र होने का वर दिया जिससे उनके एक पुत्र जन्मा फिर एक दूसरा पुत्र भी प्रथम पुत्र के साथन पालने में सोता हुआ मिला उन्होने प्रथम पुत्र का नाम तो वीरमदेव जी और दुसरे पुत्र का नाम रामदेव जी रखा।

एकस्मिन् समये चैव, रामदेवो महाबलः।
पित्रासह समापातः, पुष्करण पुरेयदा ।।
शून्यं नगर मालोक्य, ज्ञात्वावै तस्य कारणम।
तस्मिन्कालेतु राजावै, रावलों मालदेक्कः।।
राज्यं चकार महवे, राठौड़कुलभूषणः।
पुनस्तद्वासनार्थाय, महुवा ग्राम मायथौ ।।
देशाधीशं समामाद्यं, रावलं मालदेवकम् ।
मालदेवस्य कृपया, रामदेयो विशालघीः।।
आज्ञागृहीत्वा विधिवत् पोकरर्णा पुरमा गमत् ।

एक समय रामदेवजी अपने पिता के साथ इस पुष्करण वा पोकरण नगर में आये, तो इस नगर को सूना पड़ा देखा, और इसके सूना होने का करण जानकर इसको पीछा बसाने की इच्छा से वे इस देश के स्वामी रावल 'मालदेवजी' *राठौड़ से आज्ञा लेने के लिए उनके पास उनकी राजधानी महुआ ग्राम में गये। उन्होंने इनको कितनेक दिन वहाँ रख कर इनका

बड़ा आदर सत्कार किया। फिर रामदेवजी ने इस पोकरण नगर को पीछा आबाद करने के लिए उनसे आज्ञा माँगी, तिस पर उन्होंने कहा कि वहाँ तो भैरवा राक्षस रहता है, उसके भय से कोई नहीं बसता। तब रामदेवजी ने कहा कि आप तो आज्ञा दे दें, फिर भैरव से तो हम समझलेंगे। तब उन्होंने प्रसन्नता से आज्ञा दे दी। तब रामदेवजी पीछे पोकरण नगर में आये।

तदा गमनवृतान्तं, श्रुत्वा भीतस्तुराक्षसः।
यदा करपुटीकृत्य, भैरवः, समुखोऽभवत्।।
तदा तं रामदेवो वै, दिनेशं दत्तवान्मुदा।
सिन्धुदेशं जगामासौ, भयभीतस्त्वरान्वितः।।

** राठौड़राव सलखा जी के मालदेव, जैतमाल, वीरम, और सोभत नाम चार पुत्र हुए। उनमें राव मालदेव जी जो पीछे से मलीनाथ जी के नाम प्रसिद्ध हुए, सं० 1431 में महुआ ग्राम में राजगद्दी पर बैठे। इनकी रानी का नाम रूपादे था। वह बचपन ही से योगियों के पन्थ (देवी मार्ग) में थी। इसके उपदेश से राव जी भी उस पन्थ में आ गये, जिसके कारण कई सिद्ध महाराजाओं के समागम व उनकी आशिष से ये रावजी भी 'मलीनाथजी' के नाम से एक महात्मा प्रसिद्ध हो गये । इनके नाम का स्थान गांव तिलवाड़े में है। वहां अब भी प्रतिवर्ष चैत्रवदि में एक बड़ा भारी मेला भरता है। मालीनाथ जी, रानी रूपादे, सांखला हरबू, मांगलिया मेद्दा, तुँवर रामदेव और चौहाणा गोगा, इन देवी उपासक रम भक्र सिद्ध पुरूषों की एक मण्डली बनी हुई थी। मलीनाथजी के वंश वाले तो इलाके मालाणी के जागीरदार हुये, और वीरम जी वंश वाले जोधपुर राज्य के स्वामी हुये। कहते भी है कि मालेरा ने बीरमरा गढ़े।

रामदेवजी का पीछा पोकरण में आना सुनकर भैरवा राक्षस भयभीत होकर उनके सामने हाथ जोड़कर खड़ा होके कहने लगा कि 'जहाँ के लिए आप आज्ञा करें' वहीं मैं चला जाऊँ। तब रामदेव जी ने उसे सिन्ध में चले जाने को कहा तब वह सिन्ध में चला गया। *

सत्कृतं रामदेवेन, मनुजानां सुख यदा।
तस्माच्च रामदेवस्य, महिमा प्रसृतोह्यभूत।।

एक दन्तकथा है कि एक समय रामदेव जी अपनी गेंद ढुढ़ते हुए संध्या के समय बाबा बालकनाथ के मठ में चले गये। इनको देखकर उक्त योगी ने कहा कि 'बच्चा तू यहाँ कैसे आ गया। यहाँ तो भैरवा राक्षस फिरता है! वह तुझे खाजाएगा।' तब राम देव जी ने कहा कि मैं आपका चैला हुँ, अतः मुझे तो भैरवे का कुछ भी डर नहीं। आज की रात आप मुझे यहाँ रहने दें

बालकनाथजी ने इनको भोजन कराके एक कोने में गुदड़ी ओढ़ाकर सुला दिया। किन्तु आधी रात के समय भैरवा वहाँ आया और बाहर ही से पुकारने लगा कि 'आज तेरी मेढ़ी में मनुष्य की बास आती है, उसको निकाल दे, नहीं तो मैं तेरी मढ़ी की काण (मर्यादा) तोड़ता हूँ।' इतना कहकर वह अन्दर आ अया और ऱामदेव जी को ओढ़ाई हुई जो गुदड़ी थी उसको उघाड़ने लगा किन्तु वह गुदड़ी उतनी भारी हो गई कि बहुत जोर लगाने पर भी वह उसे न उठा सका। तब घबराकर वह वहाँ से पीछे भागा। तब रामदेव जी बालकनाथ की आज्ञा लेके उसके पीछे दौड़े, और उसे खड़ा रहने के लिए ललकारा तो उसने भी एक वृक्ष को उखाड़ कर प्रहार करना चाहा। वह प्रहार करने ही वाला था कि उन्होंने एक तीर से उसका काम तमाम कर दिया। दुसरी दन्तकथा है कि भेरवा भागकर अपनी गुफा में घुस गया। तब रामदेव जी ने जाकर उस गुफा का मुख पत्थरों से चुन दिया था जिससे भेरवा भीतर ही रह गया। तीसरी दन्तक़था है कि जब रामदेवजी गुफा का मुख बन्द करने लगे तब भैरवे ने प्रार्थना की कि आप बन्द न करें, मैं सिंध मे चला जाऊँ। तब रामदेव जी ने उसको जाने दिया।

भैरवे की गुफा पोकरण से रामदेवरा के जाते समय मार्ग में दहिने को रहती है जिस वर्ष वर्षा खंच होती है, तब रावले के आदमी बस्ती में से धान्य एकत्र करके गूघरियें राँध कर भैरवे की गुफा पर बलबाक़ल देते है। बालकनाथ योगी का मठ रामपोल दर-दर के बाहर है और उसी मठ में उनकी समाधि भी है।

रामदेवजी ने भैरवे राक्षस को यहाँ से सिंध में निकाल दिया जिससे सम्पूर्ण प्रदेश भर के लोगों को सदा के लिए सुख हो गया। इसलिए रामदेवजी की बड़ी

भारी प्रशंसा सर्वत्र होने लगी, और इनको अवतारी पुरुष समझ कर हिन्दू तथा मुसलमान दोनों ही इनको पूजनीय मानने लगे।

शनैः शनैश्च लोकास्ते, श्रुत्वावै निर्भयं पुरे।
पुनरा यांति ते लोका, गता ये नगराद्बहिः।।
स्वं स्वं वासं समासाद्य, व्यवहारं च पूर्ववत्।
चक्रुस्ते हर्षसंयुक्ताः, परमानन्दकारकाः।।

रामदेवजी के भय से भैरवे राक्षस के सिंध मे चले जाने की बात सर्वत्र फैल जाने से उस नगर को अब निर्भय हो गया, जान कर, पहिले के गये हुये बहुधा लोग हर्ष और आनन्द से पीछे आ आकर अपना-अपना वास पीछा करने लगे, और पूर्ववत् व्यापार भी पीछा करने लगे, जिससे वह सूना नगर पीछा बस गया।

संरक्षितः पोकरणों, रामदेवबलेन वै।
तद्देश निकटा देशाः, विनेष्टे राक्षसे सति।।
पुनः संरक्षितास्तेवै, शोभिताः सज्जनैः सदा।
पुराधीशो रामदेवः सोऽभूच्चकतिचित्समाः।।

भैरव राक्षस के भय से सूने हुये पोकरण नगर तथा निकट के प्रदेश को पीछा बसा कर उसकी रक्षा करने के कारण वहाँ के स्वामी भी रामदेवजी ही हुए। वे कितने ही वर्ष तक उसकी रक्षा करते रहे।

तस्य पुत्रास्त्रयोजाताः कन्या चैकावराऽभवत्।
कन्या विवाह योग्याऽऽसीत्तस्यायोग्यं गुणैर्वरम्।।
समालोक्य हमीरं च, वीरं राष्ट्रवरं तदा।
विवाहं कारयामास स्वभ्रातृ मानसेच्छितः।।
पारिवर्हें च कन्याया, ग्रामं पोकरण ददौ।
तदा प्रभूति तत्स्वामी, हमीरोऽभूच्च राष्ट्रकः।।

रामदेव जी के तीन पुत्र और एक कन्या थी। उस कन्या की सगाई रामदेवजी से पूछे बिना ही वीरमदेव जी ने अपनी इच्छा से महुआ के रावल मालदेव राठौड़ के दूसरे पुत्र जगपाल के पुत्र 'हमीर' से कर दी थी। रामदेवजी ने उसका विवाह अपने भाई की इच्छानुसार बड़े आनन्द से कर दिया और यह पोकरण नगर भी हथलेवे में दे दिया, जिससे इस नगर का स्वामी हमीर हुआ। *

---

* राव हमीर के पीछे उसका पुत्र दुर्जनसाल, उसके पीछे उसका पुत्र राव वरजाङ्ग और उसके पीछे उसका पुत्र राव खीया राज्य का स्वामी हुआ। इस प्रकार हमीर की चौथी पीढ़ी तक पोकरण का राज्य इनके वंश में रहा।

रामदेवस्तुतद्ग्रामात् , कोश त्रय विदूरतः ।
रूणेचा नाम्नि ग्रामेवै, वास चक्रे परंतपः ।।

जब रामदेवजी ने पोकरण नगर जमाई को दे दिया, तब आप पोकरण से उत्तर दिशा की ओर अनुमान तीन कोश की दूरी पर 'रूणोचा' नामक ग्राम में जा बसे, और वहाँ पर तपस्या करते रहे ।

रामदेवोमहासिद्धः, सर्वत्र समदृष्टिकः ।
परोपकार निरतो, पतितोद्धारकारकः ।।

रामदेवजी महान् सिद्ध पुरूष थे, वे उच्च नीचता का भेद भावन रख कर सब को समान दृष्टि से देखने वाले थे। सदैव ही परोपकार करने में तत्पर रहते थे, और पतित जातियों का उद्धार करने वाले थे। परन्तु वह समय उनके अनुकुल न होने से वह कार्य उनकी इच्छानुसार पूर्ण नही हो सका। तथापि वे स्वयं तो स्पृश्यास्पृश्य (छूआछूत)को नही मानते थे, इसी से लोगों ने यह कहावत चला दी कि "रामदेवजी ने मिलै सो ढेढ़ ही ढेढ़" वर्तमान समय की जनता द्वारा अछूतो का उद्धार होता देख कर स्वर्गस्थ रामदेवजी की आत्मा कितनी प्रसन्न होती होगी, उद्धारकों को उनके कार्य की सफलता के लिए आशिष देती होगी कि उन्हीं का प्रारम्भ किया हुआ यह कार्य शीघ्र सफल हो।

तत्वेन्दु वाण चन्द्रेऽव्दे, वैकमे समयान्विते ।
मृत्यु काले समापन्ने, समाधिस्थ, सजीवकः ।।
रामदेरो तदारभ्य, ग्राम नाम बभूवह ।।

फिर रामदेवजी ने अपनी वृद्धावस्था वा मृत्यु काल समीप आया देख कर विक्रम संवत 1515 में जीवित समाधि लेली। तब से उस रूणेचा ग्राम का नाम रामदेवरा प्रसिद्ध हो गया। *

---

* (कहा जाता है कि रामदेव जी के समाधि लेने का समाचार पाकर उनके मौसियाई भाई साँखला 'हढ़बूजी' रामदेवरे आये, तो ग्राम के निकट जङ्गल में रामदेव जी से उनकी भेंट हो गई। उनसे पूछा कि आपने तो समाधि ले ली थी फिर यहाँ कैसे? तिस पर रामदेव जी ने कहा मैंने समाधि लेली होती तो फिर आपसे कैसे मिलता? आप घर पर चलें मैं घोड़ियों को, जो जङ्गल में चरती हैं, लेकर आता हूँ। किन्तु जय हढ़बूजी घर पर आये तो समाधि की बात सही पाई। तब उन्होंने मार्ग में रामदेव जी के मिलने की बात कही तो उस पर सब को आश्चर्य हुआ और इस बात की सत्यता को देखने के लिए समाधि पीछे खोल कर देखी तो भीतर रामदेव जी का शरीर तो नहीं मिला, किन्तु भीतर से आवाज आई कि 'तुमने हमारा विश्वास न करके समाधि खोली है, इसलिए तुम्हारा मान नहीं बढ़ेगा, हमारे नाम पर खोस खाओगे' रामदेवजी के तीन पुत्र थे उनमें बड़ा पुत्र सदोजी समाधि पर के पूजापे का बट लेता छोड़ कर अन्यत्र जा बसे। वहा उन्हीं के नाम पर ग्राम बस गया, जो 'सदो' कहलाता है। दूसरे छोटे दो पुत्रों की सन्तान वाले पूजापा लेते हैं, और रामदेव जी के काबा कहाते हैं।)

प्रति वर्षे भाद्र मासे, शुक्लै कादशि वामरे ।
पूजार्थं बहवोलोकाः समागच्छन्ति सोत्सुकाः ।।

उस समाधि स्थान पर प्रतिवर्ष भाद्र सुदी 11 को एक बड़ा मेला लगता है जिस पर गुजरात, काठियावाड़ मेवाड़ आदि के दूर-दूर के यात्री लोग दर्शन को बड़े उत्साह से आते है दुसरा एक छोटा मेला माघ सुदी 11 को भी भरता है जिसमें समीप के लोग आते है लोगों का विश्वास है कि बड़े मेले में किसी-किसी अन्धे की आँख खुल जाती है, और कोई-कोई कुष्टि कुष्ट रोग से मुक्त हो जाता है।

एतन्नगर प्रारम्भे, वासितं पुष्कर मुनि।
कालान्ते शून्यतां जातो, भैरवस्य भये न च ।।
पुनश्च रामदेवेन वासितः स्वबले न च।
अधुना शोभते नित्यं, पोकरणश्चमरू स्थले।।

इस पोकरण नगर को प्रारम्भ में पुष्करणे ब्राह्मणों के पूर्वजों के समूह के प्रधान पुरूष पुष्कर ऋषि ने बसाया था। फिर बहुत समय पीछे यह नगर एक बार बीच में भैरवे राक्षस के भय से सूना हो गया था उसी को फिर रामदेवजी ने पीछे बसाया था आबाद किया था वह अध्यावधि उसी पोकरण नाम से मारवाड़ जोधपुर राज्य में जोधपुर और जैसलमेर के बीच में शोभायमान हो रहा है। *

(इस पोकरण नगर में पुष्करणे ब्राह्मणें के अनुमान 500 घर हैं। जिस स्थान पर इनकी पंचायत होती थी, वह स्थान 'गेरिये गजेरी गुवाड़ ' के नाम से प्रसिद्ध है। इनके पूर्वजों के बनवाये देव मंदिर, तालाब, बगीचियाँ बहुत है। 'विशों' की कुल देवी आशापुरा का प्रसिद्ध मंदिर यहाँ से एक मील की दूरी पर है। वहाँ विशा जाति वाले अपने 2 बालकों के केश उतरवाने आते हैं इस देवी को स० 1200 के लगभग विशा वृद्धमान जी कच्छ भुज से लाये थे।

यहाँ माहेश्वरी महाजनों के पहिले 3000 घर थे, परन्तु व्यापार के लिए धीरे-धीर विदेशों में चले गये हैं और इस समय केवल 100 ही घर यहाँ रह गये हैं। उनमें राठी जाति वालों के घर कुछ अधिक है। उनमें खुशालचन्द जी के वंश भूषण स्वर्गीय सेठ श्री खीवराज जी बड़े ही धर्मज्ञ और गो ब्राह्मण भक्त थे। उन्होने ब्यावर में आकर प्रथम एक प्रेस की स्थापना करके फिर कृष्ण भिल के नाम से एक मिल की स्थापना भी की।)

(उनके पुत्र स्वर्गीय सेठ श्री दामोदरदास जी थे वे एक होनहार और विलक्षण बुद्धि के थे। वे जनता की सेवा करना अपना परम कर्तव्य समझते थे, अपनी सच्ची बात पर निर्भीकता से दृड़ रहते थे एवं परोपकारी कार्यों में भी मुक्रहत्य व्यय करने वाले थे, किन्तु काल की कराज गति है कि ऐसे सज्जन पुरूष को दृष्ट काल ने अकाल ही में अपना ग्रास लिया। आपकी धर्मपत्नि भी बड़ी सुशीला धर्मज्ञा और आदर्श स्त्री है। आपके संतान न रहने से बड़ी खोज के साथ एक सुयोग्य लड़के को गोद लेकर अपनी बुद्धिमानी का परिचय दिया है।

गोद आये हुए ये श्रीमान् सेठ विट्ठलदास जी भी बड़े बुद्धिमान मिलनसार हँसमुख और कुटुम्ब सेवा में एवं माता की आज्ञा में तत्पर रहते है जिससे यह नहीं ज्ञात होता कि आप गोद आये हैं। आप बड़े बुद्धिमान हैं। आपने महालक्ष्मी नाकम एक मिल की स्थापना कराई है। आप कृष्ण किल का महालक्ष्मी मिल के एजेण्ट बसाये हुए नगर पुष्करण के निवासी होने से इन को लोग 'पुष्करणें' (पोकरण)कहने लग गये। अर्थात् जो विद्वान थे वे तो 'पुष्करणे' और जो सर्व साधारण थे वे 'पोकरणे' कहने लगे।)

पोकरणपुरं त्यक्त्वा, गतास्ते भूमि देवताः।

स्वस्ववासं यथा स्थानं, चक्रुस्ते रूचिपूर्वकम् ।।

यतः पोकरणं नाम, स्थापितं नगरं हि तैः ।

ततोबहितर्गताँल्लोकाः, पोकरणनिततान्विदुः ।।

जो ब्राह्मण भैरवे राक्षस के उपद्रव करने के समय इस पोकरण नगर को छोड़कर बाहर चले गये थे, वे लोग अपनी-अपनी इच्छानुसार जहाँ तहाँ जा बसे, किन्तु अपने ही पूर्वजो के बसाये हुये नगर 'पुष्करणा (पोकरण)' के निवासी होने से इन को लोग 'पुष्करणे' वा 'पोकरणे' कहने लग गये। अर्थात् जो विद्वान् थे वे तो 'पुष्करणे' और जो सर्व साधारण थे वे 'पोकरणे' कहने लगे।

सैन्धवारण्य देशीया, ब्राह्मणास्तेत्रिसंज्ञकाः।

पूर्वं 'पुष्टिकरणाश्च' ततः पुष्करणाः स्मृताः ।।

तदनन्तर माख्याताः, 'पोरकणा' ब्राह्मणास्तदा।

तस्मात्सर्वत्र विख्याता, नामत्रय धुरंधराः ।।

इस 'पुष्करण' (पोकरण) को बसाने वाले सैन्धवारण्य के ब्राह्मण तीन संज्ञा वाले है, पहिले तो 'पुष्टिकरणा' फिर 'पुष्करणा' और फिर कालान्तर में 'पोकरणे' कहलाये, अर्थात् कहीं तो पुष्टिकरने कहीं पुष्करणें, और कही पोकरणे कहलाते है। वास्तव में ये तीनों ही नाम पञ्चद्राविड़ो में की गुर्जर शाखा के अन्तर्गत सैन्धवारणय के ब्राह्मणों के है।

श्रीमान योधपुराधीशाऽभयसिंहो महीपतिः ।

रसाष्ट मुनि चन्द्रेब्दे, मार्ग कृष्णा दिवासरे ।।

तिजातीया, भगवद्दास सूनवे ।

सिहायं समदात् पोकरण पुरं शुभम् ।।

जोधपुर महाराजा अभयसिंह जी ने प्रसन्न होकर चौथा खाँप के राठौड़ ठाकुर महासिंह भगवानदास (भगवान दास जी के पुत्र महासिंह जी) के पोकरण की जागीर इनायत रदी और अपनी आज्ञा से राज्य के प्रधान (?) के तथा दिवारण राडारि अमरसिंह के हस्ताक्षरों सहित राजाज्ञापत्र सनद के मागशीर्ष बदी 1 को श्रावणु साख खरीफ फसल से अमल देने की करा दी तथ्भी से इस परगने के स्वामी महासिंह जी हुये । *

पुष्करण षुराख्यान मितिहासानुसारतः।
विस्तार भय भीतेन, संक्षेप च प्रदर्शितम ।।

यह पुष्करण वा पोकरण नगर के बसाये जाने का वृतान्त प्राचीन इतिहास में वर्णन किया गया है। विस्तारभय से संक्षेप ही से श्लोकबद्ध किया गया है। अधिक जानना हो तो लोक भाष (मारवाड़ी भाषा) में लिखा हुआ पोकरण का प्राचीन इतिहास देखों ।

७ ८ ७ १

सप्ताष्ट मुनि चन्द्रेऽव्दे, वैशाखस्प सितेदले ।
सोमवारे द्वितीयाया - माख्यानः पूर्तिमागतः ।।

यह पुष्करण (पोकरण) नगर का आख्यान अर्थात् प्राचीन इतिहास विक्रम संवत् १७८७ बैसाख सुदी २ सोमवार वा पूर्णा हुआ।

पुष्करणों के इतिहास का प्रथम भाग सम्पूर्णम्।

(दोनों मिलों का कार्य बड़ी योग्यता से करते है। आप व्यावर म्युनिसिपल कमिटि के मेम्बर होने के अतिरिक्त श्री गर्वनमेण्ट द्वारा ऑनेरी मजिस्ट्रेट नियत किये गये है। अपनी मातुश्री जी की इच्छानुसार आपने पिता दामोदरदास जी के पीछे पोकरण में पोलहथा नाम एक वृहत् भोज अर्थात् सम्पूर्ण नगर के निवासी तथा उस दिन नगर मं आ जाने वाले 36 सौ कोमो को पांच मिठाई से भोजन स० 1978 के ज्येष्ठि सुदी 9 को कराया था जिसमें कितने ही सहस्त्र रूपये लगे थे। आपको ईश्वर दीधायु करे।)

राव जोधा जी छोटे भाई चापाजी से राठौड़ू में चापावत स्रांप ---है पोकरण के वर्तमान ठाकुर साहब श्रीमान राव बहादुर ---दारासिंह जी सी.आइ.ई. चांपाजी से तो 15 वीं ओर सिंह जी से 9 वी पीढ़ी में है। आप ठिकाणा दासपी से ठा. गुमानसिंह जी के गोद आये है। अभी आप जोधपुर स्टेट कौन्सिल के पी. डब्ल्यु. डी. मेम्बर हैं, जिस कार्य को आप योग्यता से कर रहे हैं। आपके ज्येष्ठ पुत्र राय बहादुर कुंवर चैनसिंह जी एम.ए. एल.एल.बी. जोधपुर स्टेट में चीफ जज है और न्याय कार्य पूर्ण दक्ष है।

गौत्र, जाति व वेद

श्रीमान पुरूषोत्तम दास जी पुरोहित ने 7 जनवरी 1957 में पुष्करणा ब्राह्मणों की वेद शाखा, उसके इष्टदेव, गौत्र, आदि को एक नक्शे में प्रकाशित किया था। उसका सारांश यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है ताकि पुष्करणा वधु अपनी जानकारी का पुनःस्मरण कर सके।

इष्ट देवता	वेद	गौत्र	गणेश रूप	भैरू रूप	देवी	जातियाँ
सूर्य	भगवेद	लौन संगोत्र	एक दंत	गौरा	वितरणी संकरणी	बाहेती, आंवलिया मेडताल, पुच्छ तोड़ा कंपुलिया, पालेया
	यजुर्वेद	शांडिल्य गौत्र	वक्रतुंड	गौरा	देहरू सुपुगणा	पुरोहित, हेडाऊ कादा, किरता, उच्छल, नवला
	यजुर्वेद	भारद्वाज गौत्र	वक्रतुंड	कालो	जाजल चामुण्डा	काकरेचा, बोहरा, व्यास (टंकशाली) आचार्य, चूलड़
	यजुर्वेद	गौतम गौत्र	लम्बोदर	कालो	शिवदा सुभद्रा	केवलिया, गोदा, जौशी, गोदाना, माधु, गौतमा
जगदम्बा गायत्री	यजुर्वेद	उपमन्यु गौत्र	महागणपति	सोनाणो	शांकभरी सिंहवाहनी	ठकुर, बट्ट, महल, महात्मा
	यजुर्वेद	पल गौत्र	हेरंब	कालो	विजयी रांगी	गठिया, गढ़डिया ढारी
	यजुर्वेद	चन्द्रहा सगौत्र	विकराक	गौरो	सनातना सुषुमणा	दगड़ा, मूथा, पेढा रामा बायसजा
शंभु	सामवेद	पाराशर गौत्र	लीलरिया	रंगलिया	चामुण्डा महाकाल	चोवटिया, हर्ष, ओझा, नाझा
	सामवेद	कश्य गौत्र	गणाधिपति	रंगतिया	महायोगिनी रक्तदेवी	बोड़ा, लोढ़ा, भाटिया लुद्र, कमेण, काई
	सामवेद	हरित गौत्र	वृद्धोगणपति	गौरो	शंचिय शारदा	रंगा, रामदेव, थानवी मूथा, उपाध्याय, संसधरा
गणेश	सामवेद	मनकस गौत्र	गणनायक	गौरो	आशापुरा कालायरी	बिस्सा, टेटर, बिगेड, रत्ता, विडंग, विल्ला,
	सामवेद	कच्छप गौत्र	मालचन्द्र	बटुके	शिवप्रिया सुषुमणा	मत्तड़, मच्छर, मुच्चड़, टोपसिया
	सामवेद	कच्छस गौत्र	मालचन्द्र	गौरो	रत्नाबंटी	कवड़िया, वासु, किरायत किराड़ू
विष्णु	अर्थवेद	मुदृल गौत्र	हेरब	घनाबो	रस्तदंतिया जगन्नायिक	गोटा, सिंह, खीसा, खाखड़

सभी गौत्रों पर सोम व द्रोष की दृष्टि है। सभी गौत्रों के लिये ब्रह्मा विष्णु की मूर्ति का विधान है। बहुत सी सजातियों का स्पष्ट उल्लेख नहीं है पर वे विद्यमान है।

महिधरदास जी व्यास
हंसराज जी
पूनमचन्द जी
मीठा लाल जी
तनसुख जी
लक्ष्मी देवी
(लादी बाई)
यशोदा देवी
(मादी बाई)
दतक पुत्र
रघुनाथ जी
जगन्नाथ जी
मुरली बाबा (कँवारे)
भंवरलाल
पत्नी इन्द्रराज
रामदेव
पत्नी शम्भूलाल
नन्दलाल
मेघराज
गिरीश
उम्मेद कोर
श्याम सुन्दर
सरदार कोर
सूर्यराज
डॉ. पुरुषोत्तम
सोमनाथ
हीरालाल
पन्नालाल
अविनाश
योगेश
मीनाक्षी
मुकुल
उपासना
कु. स्नेहा
कु. रिषिता
सरला
दुर्गा प्रसाद
शान्ति
डॉ
पुरुषोत्तम
अजय
नरेन्द्र
वीरेन्द्र
अखिलेश
शिल्पी
विजय
नन्दकिशोर
जुगल
किशोर
आदित्य
दिव्या